दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र

CENTRE FOR DISTANCE & ONLINE EDUCATION

जम्मू विश्वविद्यालय

UNIVERSITY OF JAMMU

जम्मू

JAMMU

स्व- शिक्षण सामग्री

SELF LEARNING MATERIAL

कला सनातक सत्र -VI

B. A. SEMESTER-VI

विषय - हिन्दी	**सत्र - छठा**
SUBJECT : HINDI	SEMESTER - VI
पाठयक्रम संख्या : HI-601	आलेख संख्या: 1 से 12 तक
COURSE CODE : HI-601	LESSON NO: 1-12

Dr. Anuradha Goswami
Course Co-ordinator

इस पाठ्य सामग्री का रचना स्वत्व/प्रकाशनाधिकार दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू-180006 के पास सुरक्षित है।

http:/www.distanceeducation.in

Printed and published on behalf of the Centre for Distance & Online Education, University of Jammu, Jammu by the Director, CD&OE, University of Jammu, Jammu

B.A. SEMESTER - VI, HINDI (C.NO.: HI 601)

COURSE CONTRIBUTORS

- **Dr. Bhagwati Devi** **Lesson - 1 to 6**
  Lecturer in Hindi
  PSPS GCW Gandinagar

- **Dr. Deepika Sharma** **Lesson - 7 to 12**
  Lecturer in Hindi
  GDC Udhampur

- **PROOF READING**
  Dr. Pooja Sharma
  Lecturer in Hindi, CD&OE
  University of Jammu

© Centre for Distance & Online Education, University of Jammu, Jammu, 2025

- All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from the CD&OE, University of Jammu.
- The script writer shall be responsible for the lesson/script submitted to the CD&OE and any plagiarism shall be his/her entire responsibility.

Printed at : RAPL / 2025/ 110 Books

Syllabus of B.A. Hindi Language (हिन्दी भाषा)
Semester-6th

Course Code: HI-601 **Total Marks : 100**
Credits: 06 **Sessional Assessment: 20**
Time: 3 hours **Semester Examination: 80**

Examination to be held in May- 2023, 2024, 2025

Title- नाटककार मोहन राकेश

निर्धारित पुस्तकें–

1. आषाढ़ का एक दिन
2. बहुत बड़ा सवाल
3. अण्डे के छिलके

इकाई– एक :

नाटक : उद्‌भव एवं विकास
हिन्दी नाटक के विकास में नाटककार मोहन राकेश का स्थान
मोहन राकेश का साहित्यिक परिचय

इकाई–दो :

आषाढ़ का एक दिन की समीक्षा
आषाढ़ का एक दिन के पात्रों का चरित्र चित्रण
आषाढ़ का एक दिन की रंगमंचीयता

इकाई– तीन :

बहुत बड़ा सवाल की समीक्षा
बहुत बड़ा सवाल के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण
बहुत बड़ा सवाल की रंगमंचीयता

इकाई– चार :

अण्डे के छिलक की समीक्षा
अण्डे के छिलके के पात्रों का चरित्र चित्रण
अण्डे के छिलके की रंगमंचीयता

Syllabus of B.A. Hindi Language (हिन्दी भाषा)
Semester-6th

Course Code: HI-601 | **Total Marks : 100**
Credits: 06 | **Sessional Assessment: 20**
Time: 3 hours | **Semester Examination: 80**

Examination to be held in May- 2023, 2024, 2025

Title- नाटककार मोहन राकेश

प्रश्न पत्र का प्रारूप एवं अंक विभाजन

बाह्य परीक्षा :

1. प्रत्येक इकाई में से एक–एक दीर्घ उत्तरापेक्षी प्रश्न पूछा जाएगा। जिनमें से केवल दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगें। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लगभग 500–600 शब्दों में देना होगा।

$2x14^{1}/_{2}=29$

2. निर्धारित पुस्तकों में से शत प्रतिशत विकल्प के साथ दो सप्रसंग व्याख्या पूछी जाएगी। किन्हीं तीन इकाइयों में से एक–एक लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न (कुल तीन) पूछें जाऐंगे। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लगभग 250–300 शब्दों में देना होगा। इसमें कोई विकल्प नहीं दिया जाएगा।

7x5=35

3. प्रत्येक इकाई में से एक–एक अति लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न पूछना अनिवार्य है। कुल चार प्रश्न पूछे जाऐंगे। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लगभग 70–80 शब्दों में देना होगा। इसमें कोई विकल्प नहीं दिया जाएगा।

4x4=16

fo"k;&lwph

vkys[k la[;k	fo"k;	i"B la[;k
1.	नाटकः उद्भव एवं विकास	1—14
2.	हिन्दी नाटक के विकास में नाटककार मोहन राकेश का स्थान	15—21
3.	मोहन राकेश का साहित्यिक परिचय	22—35
4.	'आषाढ़ का एक दिन' की समीक्षा	36—42
5.	'आषाढ़ का एक दिन' के पात्रों का चरित्र—चित्रण	43—53
6.	'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की रंगमंचीयता	54—68
7.	'बहुत बड़ा सवाल' की समीक्षा	69—73
8.	'बहुत बड़ा सवाल' के प्रमुख पात्रों का चरित्र—चित्रण	74—79
9.	'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी की रंगमंचीयता	80—86
9.	'अण्डे के छिलके' की समीक्षा	87—91
10.	'अण्डे के छिलके' के पात्रों का चरित्र—चित्रण	92—96
12.	'अण्डे के छिलके' की रंगमंचीयता	97—102

B.A. HINDI | **Lesson No. 01**

COURSE CODE: HI-601 | **B.A. Sem-6th**

नाटक : उद्भव एवं विकास

1.0 रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 नाटक : उद्भव एवं विकास

1.3.1 प्रसाद पूर्व हिन्दी नाटक

1.3.2 प्रसादयुगीन हिन्दी नाटक

1.3.3 प्रसादोत्तर हिन्दी नाटक

1.4 निष्कर्ष

1.5 कठिन शब्द

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.1 **उद्देश्य –** प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप सक्षम होंगें–

– नाटक का उद्‌भव समझने में ।

– नाटक का विकासक्रम जानने में।

– नाटककारों के द्वारा रचित नाटकों को जानने में।

1.2 **प्रस्तावना –** मनुष्य वाक्‌शक्ति सम्पन्न सामाजिक प्राणी है। अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए वह सदा संघर्ष करता रहता है। वह बुद्धि एवं हृदय से युक्त होने के कारण अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ है। अन्य मानव और

प्रकृति के सम्पर्क में आने पर उसे सुख–दुख आदि भावों की अनुभूति होती है। जीवन की अनुभूति और ज्ञान को एकत्रित कर जब नाटककार उन्हें शब्द और कर्म अभिव्यक्त करता है, तभी नाटक का सृजन होता है। साहित्य मानव समाज की चित्तवृत्तियों का प्रतिबिम्ब है। साहित्य के अंगों में से नाटक का जीवन से अत्यन्त निकट संबंध है। वह जीवन का शुद्ध प्रतिबिम्ब है, उसमें जीवन की अवस्थाओं का अनुकरण होता है। संस्कृत के आचार्यो ने 'अवस्थनुकृति नाट्य रूप दृश्य तयोच्छेत' कहा है। यह परिभाषा अपने आप में ही पूर्ण है। पाश्चात्य अरस्तू काव्य को जीवन की अनुकृति मानते हैं। वास्तव में अनुकरण करने में मनुष्य को आनंद प्राप्त होता है। नाटक इसी मानवीय भावनाओं के फलस्वरूप उत्पन्न प्रतीत होता है। नाटक विश्व का प्राचीनतम साहित्य है। इसकी उत्पत्ति के मूल में मनुष्य की क्रीडन और अनुकरण प्रवृत्ति है।

1.3 नाटक : उद्भव एवं विकास

प्रसाद–पूर्व हिंदी नाटक

हिंदी–नाटक के प्रवर्तन का श्रेय 'भारतेन्दु' को प्राप्त है। भारतेन्दु से पूर्व रामायण महानाटक (प्राणचंद चौहान, 1610 ई.), करुणाभरण (लछिराम, 1715 ई.), शकुंतला (नेवाज, 1670), आनंद रघुनंदन (विश्वनाथ, 1700 ई.), हनुमन्नाटक (प्राणचंद चौहान, 1623 ई.) इत्यादि कुछ नाट्यकृतियाँ मिलती हैं, किन्तु ये नाट्योपजीवी नहीं हैं। भारतेन्दु ने हिंदी का पहला नाटक 'नहुष' (1857 ई.) को माना है, जो उनके पिता गोपालचंद्र (उपनाम गिरधरदास) द्वारा रचित पद्य–बद्ध ब्रजभषा में है। 'शंकुतला' नाटक में अभिनय हेतु प्रताप नारायण मिश्र ने अपने पिता से मूंछ मुड़ाने की आज्ञा चाही थी तो भारतेंदु ने 1868 ई. में काशी में अभिनीत नाटक "जानकी मंगल' (शीतला प्र. त्रिपाठी) में लक्ष्मण का अभिनय किया था। यह हिंदी का प्रथम अभिनीत नाटक था। भारतेंदु ने 'नीलदेवी' में 'पागल' का एवं सत्य 'हरिश्चंद्र' नाटक में हरिश्चंद्र का अभिनय किया था।

भारतेन्दु ने 9 मौलिक नाटकों (यथा–वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, विषस्य विषमौषधम्, अंधेर नगरी, भारत दुर्दशा, नीलदेवी इत्यादि) एवं 8 नाटकों (भारतेंदु के कुल नाटकों की संख्या 17) का विभिन्न भाषाओं से अनुवाद किया। इनके अनूदित नाट्कों में दुर्लभ बंधु, मुद्राराक्षस, पाखंड विडंबन इत्यादि मुख्य हैं। भारतेन्दु का पहला नाटक 'विद्या सुंदर' है। बाबू ब्रजरत्नदास एवं राधाकृष्ण भारतेंदु द्वारा रचित 'प्रवास' नाटक को उनका प्रथम नाटक बताते हैं। भारतेन्दुयुगीन अन्य नाटककारों में श्रीनिवास (रणधीर प्रेममोहिनी), प्रेमधन (भारत सौभाग्य), राधाकृष्णदास (सती प्रताप), प्रतापनारायण मिश्र (कलिकौतुक रूपक), इत्यादि मुख्य नाटककार हुए। द्विवेदी युग में हिंदी–नाटक के विकास की गति धीमी हो गई। मिश्रबंधु (शिवाजी), माखनलाल चतुर्वेदी (कृष्णार्जुन युद्ध), बदरीनारायण भट्ट (विवाह विज्ञापन) जैसे कुछ गिने–चुने नाटककारों ने इस युग में नाटक लिखें। कूल मिलाकर, 'प्रसादपूर्व हिंदी–नाटक' हिंदी नाटक का प्रारंभिक–युग था।

प्रसादयुगीन हिंदी–नाटक

भारतेन्दु–युग हिंदी–नाटक के उद्भव–विकास की दृष्टि से प्रारंभिक काल था तो प्रसाद–युग हिंदी–नाटक का बहुमुखी विकास काल सिद्ध हुआ। प्रसादजी ने हिंदी नाटकों को मौलिक शैली प्रदान की। उन्होंने नूतन नाट्यशैली द्वारा हिंदी–नाटकों का शृंगार कर, पात्रों को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान करते हुए नाट्यशिल्प के क्षेत्र में नवीनताओं का समावेश किया तथा हिंदी नाट्य–साहित्य को चरमोन्नति की सीमा तक पहुँचा दिया। ऐतिहासिक नाटककार के रूप में प्रसिद्ध प्रसाद का प्रथम नाटक 'सज्जन' (1910 ई.) और अंतिम नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' (1933 ई.) है।

जयशंकर प्रसाद ने ऐतिहासिक (चंद्रगुप्त, स्कंदगुप्त, राज्यश्री, विशाख, ध्रुवस्वामिनी इत्यादि) पौराणिक, (सज्जन, जनमेजय का नागयज्ञ), पाश्चात्य शैली पर आधारित समस्यानाटक (ध्रुवस्वामिनी), प्रतीकात्मक नाटक (कामना, एक घूँट) इत्यादि विभिन्न कोटियों के नाटकों की रचनाएँ कीं। प्रसादजी के नाटकों में भारतीय संस्कृति की महत्ता, राष्ट्रीय चेतना इत्यादि का जो स्वर व्यक्त हुआ, वह स्तुत्य है। प्रसादयुगीन अन्य नाटककारों में जी.पी. श्रीवास्तव, डॉ. रामकुमार वर्मा, उदयशंकर भट्ट इत्यादि उल्लेखनीय हैं। हिंदी–नाटक के विकास में इन सभी का योगदान अमर है।

प्रसादोत्तर हिंदी–नाटक

प्रसादोत्तर युग में नाटक की अन्य विधाओं का विकास हुआ, जिनमें एकांकी, गीतिनाट्य, रेडियो नाटक और प्रहसन इत्यादि मुख्य हैं। डॉ. नगेंद्र ने गीतिनाट्य को भावनाट्य कहा है। प्रसादोत्तर युग में हरिकृष्ण प्रेमी (रक्षाबंधन), उपेन्द्रनाथ अश्क (अंजो दीदी), जगदीश चंद्र माथुर (कोणार्क, शारदीया), मोहन राकेश (आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस), लक्ष्मीनारायण मिश्र (संन्यासी), लक्ष्मीनारायण लाल (मादा कैक्टस, रक्तकमल) इत्यादि प्रसिद्ध नाटककार हुए।

प्रसादोत्तर–युग में भुवनेश्वर प्रसाद मिश्र (ताँबे के कीड़े), रामकुमार वर्मा (पृथ्वीराज की आँखें), अज्ञेय (नए एकांकी), विष्णु प्रभाकर (शरीर का मोल) इत्यादि ने उत्कृष्ट एकांकी–नाटकों की रचनाएँ कीं तो दुष्यंत कुमार, धर्मवीर भारती, उदयशंकर भट्ट इत्यादि ने गीति नाट्य लिखा। रामकुमार वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क इत्यादि नाटककारों ने रेडियो नाटक के क्षेत्र में अपनी अद्भुत प्रतिभा का परिचय दिया। समस्यामूलक नाटकों के जन्मदाता लक्ष्मीनारायण मिश्र ने प्रसादोत्तर–युग में हिंदी–नाटक के क्षेत्र में बहुमूल्य योगदान दिया। हिंदी के समस्या नाटकों पर अंग्रेजी के इब्सन एवं बर्नार्ड शॉ का प्रभाव जबर्दस्त पड़ा।

1.3.1 प्रसाद पूर्व हिंदी नाटक एवं नाटककार

(क) भारतेन्दु–पूर्व हिंदी नाटक

रुक्मिणी हरण, परिजात हरण (14वीं सदी)– विद्यापति, विज्ञानगीता (1610 ई.) – केशवदास, रामायण महानाटक (1610 ई., ब्रजभाषा में)– प्राणचंद चौहान, सभासार (1700 ई. ब्रजभाषा में) – रघुराय नागर, करुणाभरण (1715 ई. ब्रजभाषा में)– लच्छिराम, नहुष (1857 ई.)–गिरधरदास, हनुमन्नानाटक (1623 ई)– हृदयराम, समयसार (1636 ई)–

बनारसीदास जैन, विचित्र नाटक –गुरुगोविन्द सिंह, शकुंतला (1670 ई.)–नेवाज, (शकुंतला उपाख्यान के अतिरिक्त अन्य रचना–छत्रपाल विरुदावली), देवमाया प्रपंच–देव, माधव विनोद नाटक–सोमनाथ माथुर, जानकीराम चरित्र–हरिराम, कृष्णचंद्रिका–गणेश कवि, प्रबोध चंद्रोदय (1643 ई.)–यशवंत सिंह, माधवानल कामकंदला (18वीं सदी)–आलम, रामलीला विहार नाटक –कृष्ण शर्मा, इंदरसभा (1853, ब्रजभाषा)–अमानत, प्रद्युम्न विजय (1863, ब्रजभाषा)–गणेश कवि।

(ख) भारतेन्दुयुगीन नाटक एवं नाटककार

भारतेन्दु हरिश्चंद्र–

1. अनूदित नाटक

नाट्य विधा	अनूदित कृति	मूल कृति	मूल लेखक
नाटक	(1) विद्यासुंदर (1867 ई.)	चौरपंचाशिका	चौर कवि
रूपक	(2) पाखंड विडंबन (1872 ई.)	प्रबोधचंद्रोदय	कृष्ण मिश्र
व्यायोग	(3) धनंजयविजय (1873 ई.)	धनंजयविजय	काञ्चन कवि
सट्टक	(4) कर्पूर मंजरी (1875 ई.)	कर्पूर मंजरी	राजशेखर
नाटक	(5) सत्य हरिश्चंद्र (1876)	चंडकौशिक	क्षेमेश्वर कृत
नाट्यगीत	(6) भारत जननी (बंगला की भारतमाता रूपक के आधार पर)		
नाटक	(7) मुद्राराक्षस (1878 ई.)	मुद्राराक्षस	विशाखदत्त
	(8) दुर्लभबंधु (1880 ई.)	मर्चेंट ऑफ वेनिस	शेक्सपीयर

(रामाशंकर व्यास और राधाकृष्णदास द्वारा दुर्लभबंधु (अनूदित नाटक) पूर्ण किया गया था।

मौलिक नाटक

प्रहसन – वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति (1883 ई.)

नाटिका –चंद्रावली (1876)

भाण – विषस्य विषमौषधम् (1876) (बड़ौदा के गायकवाड़ को गद्दी से उतारने तथा सयाजीराव को गद्दी पर बिठाने की घटना)

नाट्यरासक – भारत–दुर्दशा (1880) (सामाजिक नाटक)

ऐतिहासिक गीति– नील देवी (1881) (ऐतिहासिक नाटक)

प्रहसन – अंधेर नगरी (1881) (सामाजिक नाटक)

अपूर्ण कृतियाँ

नाटिका– प्रेमजोगिनी (1875) (काशी की स्थिति तथा भारतेन्दु के जीवन का संकेत)

गीतिरूपक – सतीप्रताप (1883) (सावित्री सत्यवान का पौराणिक आख्यान) प्रवास नाटक (1868) (अप्राप्त नाटक), अन्य–नवमल्लिका, रत्नावली (अनूदित), मृच्छकटिक

(ग) भारतेन्दु–युग के प्रमुख नाटककार एवं नाटक

(1) श्रीनिवास दास – रणधीर प्रेममोहिनी–1878 ई., ताप्ता संवरण–1883 ई., संयोगिता स्वयंवर–1885 ई
(2) राधाकृष्णदास– दुखिनी बाला–1880 ई, पद्मावती–1882 ई., धर्मालाप–1885 ई. और महाराणा प्रताप 1897 ई. (3) किशोरी लाल गोस्वामी–मयंक मंजरी–1891 ई. (4) देवकीनंदन त्रिपाठी–सीताहरण नाटक–1876 ई, रुक्मिणी हरण नाटक–1876 ई., रामलीला नाटक–1879 ई., कंसवध नाटक–1879 ई.,नंदोत्सव नाटक–1879 ई., लक्ष्मी सरस्वती मिलन नाटक–1881 ई., दत्त प्रचण्ड गोरक्षण नाटक 1881 ई., बालविवाह नाटक 1881 ई., गो–वध निषेध नाटक 1881 ई.।

अंबिकादत्त व्यास– ललिता नाटक 1883 ई., गो–संकट नाटक–1886 ई., मन की उमंग–1886 ई., भारत सौभाग्य–1889 ई. (2) बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन–भारत सौभाग्य–1889 ई. (3) बलदेव प्रसाद मिश्र–मीरांबाई–1897, नंद विदा 1900 ई. (4) तोताराम वर्मा–विवाह विडम्बन नाटक 1900 ई. इन्होंने भाषा संवर्धिनी सभा की स्थापना की थी। (5) प्रतापनारायण मिश्र–हठी हमीर, वेणी संहार, भारतदुर्दशा रूपक और कलिकौतुक रूपक 1890 ई (6) ज्वाला प्रसाद मिश्र – सीता वनवास–1895 ई. (7) दुर्गाप्रसाद मिश्र–प्रभास मिलन–1899 ई. (8) अन्य – गोपालराम गहमरी (देशदशा), देवदत्त शर्मा (अति अंधेर नगरी), विजयानंद त्रिपाठी (महाअंधेर नगरी), जगतनारायण (भारत डिमडिमा नाटक), काशीनाथ खत्री (निकृष्ट नौकरी, ग्राम पाठशाला), बालमुकुन्द पाण्डेय (गंगोत्री) इत्यादि।

(घ) भारतेंदु–युग के अनूदित नाटक

काशी के पंडित रघुनाथ द्वारा 1880 ई. में 'भारतेंदु' की उपाधि से विभूषित भारतेन्दु द्वारा संस्कृत, बंग्ला और अंग्रेजी नाटकों का अनुवाद किया गया। 1861 ई. में राजा लक्ष्मण सिंह ने शकुन्तला का अनुवाद किया था। लाला सीताराम बी.ए. (1858–1937 ई.) ने भवभूति के नाटकों महावीर चरित, उत्तरराम चरित, मालती माधव; कालिदास के मालविकाग्निमित्र; शूद्रक के मृच्छकटिक का अनुवाद किया। भारतेंदु–युग में शेक्सपीयर के नाटकों के अनुवाद की धूम रही। रत्नचंद्र ने कौमेडी ऑफ एरर्स का अनुवाद भ्रमजालक शीर्षक से, जबलपुर की आर्या ने मर्चेंट ऑफ वेनिस का अनुवाद किया। जयपुर के पुरोहित गोपीनाथ द्वारा ऐज यू लाईक इट (मनभावन–1896 ई.), रोमियो एण्ड जुलियट

(प्रेमलीला 1897 ई.) का अनुवाद किया गया। मथुरा प्रसाद ने मैकबेथ का अनुवाद 'साहसेन्द्र साहस' शीर्षक से 1893 ई. में किया। बंगला नाटकों का अनुवाद रामकृष्ण वर्मा, उदितनारायण लाल आदि ने किया।

(ङ) द्विवेदीयुगीन हिंदी नाटक

बदरीनाथ भट्ट (दुर्गावती, वेनचरित, चन्द्रगुप्त, कुरूवन दहन, गोस्वामी तुलसीदास), बलदेव प्रसाद मिश्र (प्रभास मिलन, राजा ययाति, मीराँबाई, शंकर दिग्विजय), सोमेश्वर दत्त शुक्ल (सावित्री सत्यवान), मिश्रबन्धु (नेत्रोन्मीलन), मैथिलीशरण गुप्त (चन्द्रहास, तिलोत्तमा), माखनलाल चतुर्वेदी (कृष्णार्जुन युद्ध), हरिदास माणिक (पाण्डव–प्रताप, श्रवण कुमार), पण्डित माधव शुक्ल (महाभारत–अपने युग का सबसे सफल और चर्चित नाटक), इन्द्र वेदालंकार (स्वर्ण देश का उद्धार) इत्यादि। द्विवेदी–युग के अन्य नाटककारों में राय देवी प्रसादपूर्ण, दुर्गा प्रसाद मिश्र और रामप्रसाद मिश्र इत्यादि का श्लाघनीय योगदान हिंदी–नाटक के क्षेत्र में है।

1.3.2 प्रसादयुगीन नाटक (1915—1937)

जयशंकर प्रसाद ने तेरह नाटकों की रचनाएँ की हैं। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

1. सज्जन – 1910 ई. में प्रसाद ने 'सज्जन' नाटक लिखा था, जिसमें युधिष्ठिर की सज्जनता का वर्णन है। यह नाटक महाभारत की घटना पर आधारित है। इसमें अनेक प्राचीन नाट्य–रूढ़ियों का पालन किया गया है। जैसे– सूत्रधार, नटी का प्रयोग, नान्दीपाठ, मंगलाचरण, भारत वाक्य इत्यादि। इसे प्रसाद का प्रथम नाटक माना जाता है।

2. कल्याणी–परिणय – इसमें सिल्यूकस की पुत्री कल्याणी और चन्द्रगुप्त का प्रेम तथा इतिहास–प्रसिद्ध चंद्रगुप्त मौर्य और सिल्यूकस की कहानी है। इसका रचनाकाल 1912 ई. है।

3. करुणालय – हरिश्चन्द्र और विश्वामित्र के प्रसिद्ध पौराणिक आख्यान पर आधारित 'करुणालय' नाटक सन् 1913 ई. में रचित है। प्रसाद का यह नाटक पद्य में और गीति नाट्य–शैली पर आधारित है। इसे हिंदी का प्रथम गीति नाट्य कहा गया है। कुछ विद्वान् भारतेंदु कृत भारत जननी को हिंदी का प्रथम गीति नाट्य मानते हैं।

4. प्रायश्चित – 1914 ई. में प्रसाद ने 'प्रायश्चित' नाटक लिखा था, जिसमें जयचन्द के पश्चात्ताप की मार्मिक अभिव्यक्ति तथा जयचंद के मूर्खतापूर्ण कुचक्र के कारण पृथ्वीराज के अंत का वर्णन है।

5. राज्यश्री – 'राज्यश्री' नाटक की रचना 1915 ई. में हुई थी। इस ऐतिहासिक नाटक में हर्षवर्द्धन की बहन राज्यश्री के उज्ज्वल चरित्र पर प्रकाश डाला गया है। नाटक का आधार 'हर्षचरित' एवं चीनी यात्री ह्वेनसांग का ऐतिहासिक विवरण है। इसी नाटक से प्रसाद की नाट्यकला प्रौढता की ओर उन्मुख दिखाई देती है।

6. विशाख – 1921 ई. में प्रसाद ने 'विशाख' नाटक लिखा था। तक्षशिला विश्वविद्यालय के एक स्नातक, विशाख की चारित्रिक विशेषताएँ इस नाट्यकृति में व्यंजित हैं। विशाख नाटक का कथानक कल्हण की 'राजतरंगिणी' पर आधारित है।

7. अजातशत्रु– 1922 ई. में लिखित 'अजातशत्रु' प्रसाद की एक सफल एवं प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाट्य–रचना है, जिसका कथानक रस और द्वन्द्व दोनों ही दृष्टियों से यह एक उत्कृष्ट नाटक है। बिम्बसार और अजातशत्रु का संघर्ष इसका मुख्य प्रतिपाद्य है। मगध, कोशल और कौशाम्बी इन तीन स्थानों से यह नाटक सम्बद्ध रखता है।

8. कामना– 1924 ई. में रचित 'कामना' प्रसाद का एक चर्चित प्रतीकात्मक और समसस्यामूलक नाटक है। इसमें प्रसादजी ने स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दता के अन्तर को अत्यन्त प्रभावकारी रूप में स्पष्ट किया है। पाश्चात्य सभ्यता के अभिशाप को प्रदर्शित करना ही नाटककार का मुख्य उद्देश्य है। यह संस्कृत के प्रबोध चंद्रोदय की भाँति अन्योपदेशिक नाटक है। प्रसाद का 'कामना' (1927 ई.) पंत का 'ज्योत्स्ना' (1934 ई.) और भगवती प्रसाद वाजपेयी कृत 'छलना' (1939 ई.) नाटक अन्योपदेशिक नाटक हैं। प्रतीकवादी नाटकों को अन्योपदेशिक नाटक कहते हैं।

9. जन्मेजय का नागयज्ञ– 1926 ई. रचित इस नाटक में परीक्षित के प्रतापी पुत्र जनमेजय का नागों से संघर्ष का मार्मिक रूप में वर्णन हुआ है। सज्जन और जनमेजय का नागयज्ञ प्रसाद के पौराणिक नाटक हैं।

10. स्कन्दगुप्त– 1928 ई. रचित 'स्कन्दगुप्त' हिन्दी के अत्यन्त प्रसिद्ध एवं प्रसाद के सर्वोत्तम नाटकों में परिगणित होता है। स्कन्दगुप्त, विक्रमादित्य का त्यागमय जीवन भारतीयों के लिए सदा प्रेरणा–स्रोत बना रहेगा। इस नाटक में पाश्चात्य एवं भारतीय नाट्य–विधियों का सुंदर समन्वय हुआ है।

11. एक घूँट – 'एक घूँट' (1930 ई.) प्रसादजी का प्रसिद्ध एकांकी है। यह भी 'कामना' की भाँति एक प्रतीकात्मक समस्यामूलक रचना है, जिसमें प्रसाद ने प्रतीकों के द्वारा आनंदवादी दृष्टिकोण की स्थापना की है।

12. चन्द्रगुप्त – 1931 ई. में लिखित 'चन्द्रगुप्त' प्रसाद की एक श्रेष्ठ एवं अत्यन्त प्रसिद्ध नाट्यकृति है। राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत इस नाटक में राष्ट्रीय अखंडता का संदेश दिया गया है। इस नाटक में ई. पू. 327 से लेकर ई. पू 305 तक अर्थात् 22 वर्षों के संपूर्ण घटनाक्रम को वाणी मिली है। कुछ विद्वानों ने चंद्रगुप्त को प्रसाद का सर्वोत्तम नाटक माना है।

13. ध्रुवस्वामिनी–1933 ई. में रचित 'ध्रुवस्वामिनी' प्रसाद की अन्तिम नाट्यकृति है। अभिनेयता की दृष्टि से यह प्रसाद के नाटकों में सबसे सफल है। पुनर्विवाह की समस्या का समाधान और नारी अधिकार–चेतना की दृष्टि से यह नाटक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। पाश्चात्य–शैली पर रचित यह नाटक जयशंकर प्रसाद का एक

समस्या मूलक नाटक है। 'कल्याणी', 'परिणय', 'प्रायश्चित', 'राज्यश्री', 'विशाख', 'अजातशत्रु' 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त' और 'ध्रुवस्वामिनी' प्रसाद के ऐतिहासिक नाटक हैं। ध्रुवस्वामिनी नाटक विशाख के देवी चंद्रगुप्तम् नाटक पर आधारित है।

प्रसादयुगीन अन्य नाटककार

(1) विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक–भीष्म, 1918 (2) बद्रीनाथ भट्ट–वेन चरित्र–1921 ई., दुर्गावती–1925 (3) गोविंद वल्लभ पंत – वरमाला–1925, राजमुकुट–1935, अंगूर की बेटी–1937 ई. (4) सुदर्शन–दयानंद नाटक–1917, अंजना–1923 ई., भाग्य चक्र–1937 (तीन नाटक) (5) दुर्गाप्रसाद गुप्त – गौतम अहल्या–1921, विश्वामित्र नाटक–1921, अभिमन्युवध नाटक – 1922 ई., हम्मीर हठ–1932 ई. (6) पाण्डेय बेचन शर्मा श्उग्र–महात्मा ईसा–1922, चुम्बन–1937 ई., डिक्टेटर–1937 ई (7) जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी–मधुर मिलन–1923, तुलसीदास–1934 ई. (8) लक्ष्मीनारायण मिश्र–संन्यासी – 1930 ई., राक्षस का मंदिर–1931 ई. मुक्ति का रहस्य–1932 ई, राजयोग–1933 ई., सिंदूर की होली–1934 ई., आधी रात–1934 ई. (9) जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द– प्रताप प्रतिज्ञा–1929 ई., (अन्य नाटक–जीवन संगीत, नवयुवक का ज्ञान, बलिपथ के गीत, भूमि की अनुभूति, पंखुरिया) (10) उदयशंकर भट्ट–विक्रमादित्य–1929 ई., सागर विजय–1933 ई., दाहर अथवा सिंघपतन–1933 ई., विद्रोहिणी अम्बा–1935 ई, कमला–1935 ई. (11) चंद्रगुप्त विद्यालंकार – अशोक–1935 ई, रेवा–1935 ई. (12) हरिकृष्ण प्रेमी – स्वर्ण विहान – 1930 ई., रक्षाबंधन – 1934 ई.पाताल विजय–1936 ई., शिवा साधना–1937 ई, प्रतिशोध–1937 ई. (13) सेठ गोविंददास–हर्ष–1935 ई., प्रकाश–1935 ई., कर्त्तव्य 1935 ई. (14) संग्राम–1923 ई. मुंशी प्रेमचंद–संग्राम–1923 ई., कर्बला–1924 ई., प्रेम की वेदी– 1933 ई. इत्यादि।

हास्यपूर्ण नाटककार

(1) जी.पी श्रीवास्तव–उलटफेर–1918 ई., दुमदार आदमी–1919 ई., मरदानी औरत–1920 ई., विवाह विज्ञापन–1927 ई., मिस अमेरिकन–1929 ई. (2) बदरीनाथ भट्ट–चुंगी की उम्मीदवारी–1919 ई., लबड़धोंधा–1926 ई. (3) पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र–उजबक और चार बेचारे (4) राधेश्याम कथावाचक–कौंसिल की मेम्बरी (5) सुदर्शन–आनरेरी मजिस्ट्रेट।

अनूदित नाटक

संस्कृत – भास विरचित स्वप्नवासवदत्ता–1929 ई.– मैथिलीशरणगुप्त, भास कृत 'प्रतिमा' और पंचरात्र का अनुवाद–अतरचंद कपूर, दिङ्नाग के कुन्दमाला का अनुवाद हरदत्त–1931 ई., हर्ष के नागानन्द का अनुवाद हरदयालु सिंह–1935 अंग्रेजी–साहित्य–मारिस मेटरलिंक (बेल्जियम के कवि) की छोटी नायिकाओं का अनुवाद बख्शीजी–19161।

1.3.3 प्रसादोत्तर नाटककार

1. उदयशंकर भट्ट पौराणिक नाटक–अंबा– 1935, सागर विजय–1997, मत्स्यगंधा–1937, विश्वामित्र–1938, राधा–1941, अशोक वन वन्दिनी–1959, गुरु द्रोण का अंतर्निरीक्षण–1959, अश्वत्थामा–1959, असुर सुन्दरी–1972।

ऐतिहासिक नाटक – विक्रमादित्य–1933, दाहर या सिंध पतन–1934 ई, मुक्तिपथ–1944 ई, शकविजय–1949 ई.।

2. वृन्दावनलाल वर्मा **–** ऐतिहासिक नाटक – फूलों की बोली–1947 ई., झांसी की रानी–1948, कश्मीर का काँटा–1948, खिलौने की खोज (समस्या नाटक)–1950, पूर्व की ओर–1950, बीरबल–1950।

3. सेठ गोविंददास – ऐतिहासिक नाटक – हर्ष–1935, कुलीनता–1940, शशिगुप्त–1942। समस्या नाटक – प्रकाश–1935, विकास–1940, सेवापथ–1940, संतोष कहाँ–1945, महत्त्व किसे–1947, गरीबी और अमीरी–1947। पौराणिक नाटक–कर्त्तव्य–1935।

4. लक्ष्मीनारायण मिश्र– ऐतिहासिक नाटक – अशोक–1926, गरुड़ध्वज–1945, वत्सराज–1950, दशाश्वमेध–1950, वितस्तता की लहरें– 1953, धरती का हृदय, कालविजय गंगाद्वार–1974, ।

5. गोविंदवल्लभ पंत – ऐतिहासिक– राजमुकुट–1935, अंतःपुर का छिद्र–1940, तुलसीदास–1974, आत्मदीप–1978, कुमार हृदय का भग्नावशेष–1936। अंगूर की बेटी (समस्या नाटक)–1937

6. हरिकृष्ण प्रेमी – ऐतिहासिक नाटक – रक्षाबंधन–1937 ई., शिवा–साधना–1937, प्रतिशोध–1937, स्वप्नभंग–1940, आहुति–1940, उद्धार–1949, प्रकाश स्तंभ–1954, कीर्ति स्तम्भ–1955, शतरंज के खिलाड़ी–1955, विदा–1958, संरक्षक–1958, सांपों की दृष्टि–1959, रक्तदान–1962, आन का मान–1962,अमरआन–1964, अमर बलिदान–1968, अमृतपुत्री–1970। समस्या नाटक छाया–1941, बंधन–1941।

7. डॉ. रामकुमार वर्मा

ऐतिहासिक नाटक– कौमुदी महोत्सव–1954, विजयपर्व–1954, कला और कृपाण–1955, नाना फड़नवीस–1956, महाराणा प्रताप–1960, शिवाजी–1965, अशोक का शोक–1967, जौहर की ज्योति–1967, अग्नि शिखा–1970, जय आदित्य–1971, संत तुलसीदास–1974, जय वर्धमान–1975, भगवान बुद्ध–1975, सम्राट् कनिष्क–1978, स्वयंवरा–1980। अन्य–वत्सराज उदयन, महामेघवाहन खारवेल, जहीरूद्दीन मुहम्मद बाबर।

8. उपेन्द्रनाथ अश्क

समस्या नाटक – लक्ष्मी का स्वागत–1935, स्वर्ग की झलक–1940, छठा बेटा–1940, देवताओं की छाया–1940, अलग–अलग रास्ते–1954, अंजो दीदी–1955, भँवर–1961, बड़े खिलाड़ी–1967, लौटता हुआ दिन–1972। ऐतिहासिक नाटक–जयपराजय–1937।

9. लक्ष्मीनारायण मिश्र–समस्या नाटक – राक्षस का मंदिर–1931, संन्यासी–1931, मुक्ति का रहस्य–1932, राजयोग–1934, सिंदूर की होली–1934, आधीरात –1937 ।

10. भगवतीचरण वर्मा– वसीयत–1978, तारा–गीतिनाट्य।

11. अमृतलाल नागर – रेडियो नाटकों का संकलन "चंदनवन–1976 में प्रकाशित। 1978 में रेडियो नाटकों का दूसरा संकलन–'चक्करदार सीढ़ियों और अँधेरा' प्रकाशित; इसमें संकलित 'महीपाल' गंभीर एवं चर्चित नाटक है।

12. विष्णु प्रभाकर – "डॉक्टर–1958 (इसी नाटक से ख्याति मिली), युगे–युगे–क्रांति–1969, टूटते परिवेश–1974, कुहासा और किरण–1975, डरे हुए लोग–1978, वंदिनी–1979, अब और नहीं,–1981, सत्ता के आर–पार–1981, श्वेत कमल–1984। विष्णु प्रभाकर मानवतावादी रचनाकार हैं।

13. भीष्म साहनी– हानूश–1977, कबिरा खड़ा बाजार में–1981, माधवी––1985 (इनके तीनों नाटक प्रसिद्ध हैं)। 'हानूश' नाटक चेकोस्लोवाकिया में प्रचलित लोक–कहानी पर आधारित है; इसमें एक श्रमशील सामान्य कलाकार की अदम्य सृजनेच्छा (एक मिस्त्री द्वारा 17 वर्षों के परिश्रम द्वारा मीनारघड़ी का निर्माण, सत्ता की क्रूरता, बादशाह द्वारा मिस्त्री की आँखें निकलवा देना ताकि दूसरा न बना पाये, कलाकार की दारुण पीड़ा, उसकी सृजनशक्ति की अमरता) का चित्रण हुआ है। 'माधवी' में गालव (विश्वामित्र के शिष्य) और माधवी की पौराणिक कथा का आधुनिक संदर्भ में विवेचन एवं 'कबिरा खड़ा बाजार में' कबीर के युग– प्रवर्त्तक व्यक्तित्व का निरूपण है। इनका "मुआवजे (1993 ई.) पंजाबी में लिखित नाटक है, जिसका इन्होंने स्वयं अनुवाद किया है। रंग दे बसंती चोला (1998) जलियावाला हत्याकांड विषयक एवं 'आलमगीर' (1999) औरंगजेब व दाराशिकोह के मजहबी द्वन्द्व पर आधारित भीष्म साहनी के अन्य नाटक हैं।

14. जगदीशचंद्र माथुर – कोणार्क–1951, शारदीया–1959, पहला राजा–1969, दशरथ नंदन–1974, रघुकूल रीति–1985 (कुल 5 नाटक)। 'कोणार्क' –1951 से ख्याति मिली। शारदीया (ऐतिहासिक), पहला राजा (मॉडर्न एलिगरी, जिसमें नेहरू–युग की समस्याएँ, पृथु के रूप में नेहरू मूर्त), दशरथनंदन (मानस की मुख्य कथा), रघुकुल रीति (रामलीला–पद्धति पर लिखित इस नाटक का उद्देश्य तुलसी के मानस के मर्म को पाठकों तक पहुँचाना है)। 'पहला राजा' नाटक इलाहाबाद वाले नेहरू की स्मृति में समर्पित है। यह नाटक न पौराणिक है, न ऐतिहासिक और न यथार्थवादी। यह तो एक मॉडर्न एलिगरी आधुनिक अन्योक्ति का मंचीय रूप है।

15. लक्ष्मीकांत वर्मा– तिंदुवुलम्–1958, सीमांत के बादल–1963, अपना–अपना जूता–1964, रोशनी एक नदी है–1974 (एब्सर्ड नाटक), ठहरी हुई जिंदगी–1980 (यह नाटक बहुचर्चित हुआ। आज के विसंगतिपूर्ण जीवन में राम की तलाश–प्रतिपाद्य) वर्मा जी के नाटक प्रयोगधर्मी हैं। ये आधुनिकताबोध (विसंगति) के नाटककार हैं।

16. विनोद रस्तोगी – इनके मुख्य नाटक हैं–आजादी के बाद, नये हाथ, बर्फ की मीनार, जनतंत्र जिंदाबाद, गोपा का दान, देश के दुश्मन, फिसलन और पाँव, भगीरथ के बेटे, सराय के अंदर। आधुनिक समस्या के नाटककार के रूप में इनकी ख्याति है।

17. मोहन राकेश – आषाढ़ का एक दिन–1958, लहरों के राजहंस–1963, आधे–अधूरे–1969–(3 नाटक)। 'आधे–अधूरे' स्वातंत्र्योत्तर भारत का पहला हिंदी नाट्क है, अश्वघोष की रचना 'सौन्दरनंद' पर 'लहरों के राजहंस नाटक आधारित है। इस में राग–विराग, श्रेय–प्रेय के द्वन्द्र को प्रकट किया गया है। 'आधे–अधूरे' नाटक टूटते पारिवारिक मूल्य का यथार्थ चित्रण है। 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में कालिदास का चरित्र परंपरा से भिन्न वर्णित हुआ है। स्वाधीन भारत के सबसे सफल हिंदी–नाटककार मोहन राकेश हैं।

18. लक्ष्मीनारायण लाल – अंधा कुआँ–1955, मादा कैक्टस–1959 (प्रतीकात्मक नाटक), तीन आँखों वाली मछली–1960, सूखा सरोवर–1960 (प्रतीकात्मक नाटक), नाटक बहुरंगी–1961, नाटक तोता– मैना–1962 (लोक नाट्य), रातरानी–1962, दर्पण–1962, रक्तकमल–1963, सूर्यमुख–1968, कलंकी–1969, मि. अभिमन्यु–1971, कर्फ्यू–1972, दूसरा दरवाजा–1972, अब्दुला दीवाना–1973, नरसिंह कथा–1975, व्यक्तिगत–1975, गुरु–1976, यक्षप्रश्न–1976, एक सत्यहरिश्चंद्र–1976, गंगामाटी–1977, सगुनपंछी–1977, सबरंगमोहभंग–1977, पंचपुरुष–1978, राम की लड़ाई–1979, बलराम की तीर्थयात्रा–1983, कजरीवन।

19. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना – बकरी–1974 (प्रथम नाटक बेहद चर्चित), लड़ाई–1979, अब गरीबी हटाओ, कल भात आयेगा। 'बकरी' व्यंग्य नाटक है। जनवादी नाटकों की परंपरा में सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के नाटक प्रमुख हैं। लोक–नाट्य शैली में रचित इनके नाटक बेजोड़ हैं।

20. अमृतराय – चिंदियों की एक झालर–1969, शताब्दी, हमलोग 'आज अभी' शीर्षक से भी ये तीनों नाटक प्रकाशित हुए हैं।

21. ज्ञानदेव अग्निहोत्री – शुतुरमुर्ग–1968 से ख्याति मिली। अनुष्ठान, नेफा की एक शाम–1962 (चीनी आक्रमण के समय की स्थिति का चित्रण), चिराग जल उठा–1968 (टीपू का विदेशियों से युद्ध का वर्णन), अनुष्ठान (हिंसात्मक वृत्ति की निरर्थकता का वर्णन), माटी जागीर–1964, वतन की आबरू–1966। इनके शुतुरमुर्ग को राजनीतिक फैंटेसी या सामाजिक–राजनीतिक फार्स कहा गया है। यह समसामयिकता, प्रतीकात्मकता एवं प्रयोगात्मकता की दृष्टि से प्रथम सार्थक नाटक माना गया है। इनका 'अनुष्ठान' नाटक मानव की दिग्प्रांति यात्रा का नाटक है।

22. सुरेन्द्र वर्मा – द्रौपदी–1972 (ख्यातिप्राप्त नाटक), सेतुबंध–1972, नायक खलनायाक विदूषक–1972, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक–1975, 8वाँ सर्ग–1976, छोटे सैयद बड़े सैयद–1982, एक दूनी एक–1987, शकुंतला की अंगूठी–1990। कालिदास के 'कुमारसंभवम' महाकाव्य के 8वें सर्ग पर आधारित 'आठवां सर्ग', नाटक पहली बार 'हत्या' शीर्षक से 'कथा पत्रिका' में प्रकाशित हुआ था। इसी प्रकार, 'छोटे सैयद बड़े सैयद' नाटक, हसन अली हुसैन अली' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था।

23. रमेश बक्षी – देवयानी का कहना है–1972, तीसरा हाथी–1975, वामाचार–1977, कसे हुए तार–1979, यादों के पार–1979। ये बोल्ड आधुनिकतावादी, विडंबना और विसंगति बोध के नाटककार हैं।

24. काशीनाथ सिंह – घोआस–1967 (बुद्धिजीवी वर्ग की संत्रस्त मानसिकता का निरूपण)।

26 सत्यव्रत सिन्हा – अमृतपुंज–1974 (आधुनिकताबोध के नाटककार)।

27. मणि मधुकर – रसगंधर्व–1975 (इससे ख्याति मिली), बुलबुल की सराय–1978, दुलारीबाई–1978, खेला पोलमपुर–1979, इकतारे की आँख–1980, (कबीर के व्यक्तित्व से संबंधित)। ये लोकनाट्य शैली के राजनीतिक एवं सामाजिक कोटि के नाटककार हैं।

28. शंकर शेष – 'एक और द्रोणाचार्य–1977 (विशेष ख्याति प्राप्त रचना), घरौंदा–1978, अरे मायावी सरोवर–1980, अन्य–कोमल गांधार, पोस्टर, खजुराहो का शिल्पी। इनकी विसंगति बोध के नाटककार के रूप में प्रसिद्धि है।

29. गिरिराज किशोर– बादशाह गुलाम बेगम–1979, प्रजा ही रहने दो–1980, घोड़ा और घास–1980, चेहरे–चेहरे किसके चेहरे, केवल मेरा नाम लो, जुर्म आयद–1987।

30. असगर वजाहत–अकी, जिन लाहौर नई वेख्या, सबसे सस्ता गोस्त (नुक्कड़ नाटकों का संग्रह)

31. दुष्यंत कुमार– और मसीहा मर गया, एक कंठ विषपायी (काव्य नाटक)

32. मुद्राराक्षम– आला अफसर–1979, गुफाएँ–1979, संतोला–1980 ई.। अन्य–तिलचट्टा (1972), योर्स फेथफुली (1974), मरजीवा, तेंदुआ, प्रथम प्रस्तुति। इन्होंने नाटक की भाषा को 'हाशिये की भाषा' कहा है। रूसी नाटककार 'गोगोल' के नाटक इंस्पेक्टर जनरल का हिंदी नाट्य रूपान्तर इन्होंने 'आला अफसर' शीर्षक से किया है।

33. दूधनाथ सिंह– 'यमगाथा'–1990 (पुरुरवा–उर्वशी की पौराणिक गाथा का निरूपण आज के संदर्भ में)।

34. नरेन्द्र मोहन– कहै कबीर सुनो भाई साधो–(चर्चित रचना, कबीर का व्यक्तित्व)।

35. कमलेश्वर – अधूरी आवाज, रेत पर लिखे नाग, हिन्दोस्तां हमारा।

36. हबीब तनबीर – आगरा बाजार–1954, शतरंज के मोहरे–1954, लाल शोहरत राय–1954, मिट्टी की गाड़ी–1958, गाँव के नांव ससुराल, मोर नांव दामाद–1973, चरणदास चोर–1975, उत्तर रामचरित्र–1978, बहादुर कलारिन–1984, पोंगा पंडित–1992, जिने लाहौर नहीं वेख्या ओ जम्या नहीं–1990, कामदेव का अपना वसंत ऋतु का सपना–1993, जहरीली हवा–2002, राजरक्त–2006।

महिला नाटककार

1. मन्नू मंडारी – बिना दीवारों का घर–1965 (पति–पत्नी तनाव से संबंधित नाटक), महाभोज–1982 (उपन्यास 'महाभोज' का नाट्य रूपांतर)।

2. शांति मेहरोत्रा – एक और दिन, ठहरा हुआ पानी (195)।

3. मृदुला गर्ग – एक और अजनबी (1978), जादू का कालीन (1993), कितनी कैंदें (1969), दुलहिन एक पहाड़ की (1969), दूसरा संस्करण (1969)।

4. मृणाल पाण्डेय – जो राम रचि राखा, मौजूदा हालत को देखते हुए, आदमी जो मछुआरा नहीं था।

5. कुसुम कुमार – दिल्ली ऊँचा सुनती है (सत्ता की विवेकहीनता और निष्क्रियता पर व्यंग्य), रावणलीला, संस्कार को नमस्कार, ओम क्रांति क्रांति, सुनो शेफाली, मादा मिट्टी, पवन चतुर्वेदी की डायरी, सलामी मंच लश्कर चौक (1979, उग्र की कहानी खुदाराम से प्रभावित नाटक)। ये महिला नाटककारों में सबसे ज्यादा नाटक लिखनेवाली नाटककार हैं।

6. गिरीश रस्तोगी – रंगनाथ की वापसी (रागदरबारी का नाट्य रूपांतर), इन्होंने हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'बाणभट्ट की आत्मकथा का भी नाट्य रूपांतर किया। असुरक्षित, मुझे मत मारो–अन्य 2 मौलिक नाटक।

7. विभा रानी – 'अगले जन्म मोहे बिटिया ही कीजो' (कुर्रतुल ऐन हैदर ने 'अगले जन्म मोहे बिटिया न कीजो' शीर्षक से आत्मकथात्मक उपन्यास लिखा है)।

8. प्रतिमा अग्रवाल – प्रेमचंद के 'गोदान' और अमृतलाल नागर के सुहाग के नूपुर का नाट्य रूपान्तरण। इन्होंने एस.एल भैरप्पा के नाटक (वंशवृक्ष) तथा बादल सरकार के अनेक नाटकों का अनुवाद किया है।

1.4 निष्कर्ष – आधुनिक हिन्दी साहित्य की अन्य विधाओं के मुकाबले में हिन्दी नाटक का विकास मंद गति से हुआ है और आने वाले समय में इस विधा का और अधिक विस्तार मिलना स्वाभाविक है। नाटककारों ने समय–समय पर नाटक विधा को न केवल जीवित रखा है बल्कि समय की मांग के अनुरूप उसमें नये तत्वों का समावेश कर उसे रूचिकर भी बनाया है।

1.5 कठिन शब्द – अभिनीत, मौलिक, प्रर्वतन, चेतना, उत्कृष्ट, अनूदित, संकेत, अनुवाद, शीर्षक, उपाधि।

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न –

प्रश्न 1 हिन्दी नाटक के उद्भव पर सविस्तार प्रकाश डालें।

प्रश्न 2 हिन्दी नाटक के विकासक्रम पर दृष्टि डालिए।

प्रश्न 3 प्रसादोत्तर नाटकों की विषयवस्तु संक्षिप्त रूप से बताइए।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. 'आषाढ़ का एक दिन' – मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटकः उद्भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा
3. हिन्दी नाटक और रंगमंचः पहचान और परख – सं. डॉ. इन्द्रनाथ मदान
4. मोहन राकेश की रंग सृष्टि– जगदीश शर्मा
5. मोहन राकेश का नाट्य साहित्यः प्रेरणा एवं स्रोत – डॉ. राजेश्वर प्रसाद सिंह
6. हिन्दी का गद्य साहित्य – रामचन्द्र तिवारी
7. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास – बच्चन सिंह

******

हिन्दी नाटक के विकास में नाटककार मोहन राकेश का स्थान

2.0 रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 हिन्दी नाटक के विकास में नाटककार मोहन राकेश का स्थान

2.4 निष्कर्ष

2.5 कठिन शब्द

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.1 उद्देश्य – प्रस्तुत पाठ के उपरान्त विद्यार्थी सक्षम होंगें–

– हिन्दी नाटककारों में मोहन राकेश के महत्व के विषय को जानने में।

– मोहन राकेश द्वारा लिखित नाटकों की विषय वस्तु को समझने में।

– हिन्दी नाटककारों को जानने में।

2.2 प्रस्तावना

राकेश जी हिन्दी के एकमात्र ऐसे नाटककार हैं, जिनके सभी नाटकों का सफलतापूर्वक मंचन हो चुका है, इन्होंने नाटक के सभी पक्षों पर चिंतन कर उसके स्वरूप, आत्मा, नाट्य– प्रयोजन, कथावस्तु, संवाद, रंगशिल्प आदि

विषयों से संबंधित अपनी मान्यताओं को अभिव्यक्ति प्रदान की। भारतीय एवं पाश्चात्य नाटककारों के प्रभाव से मुक्त होकर नाट्य–लेखन तथा रंग–अनुभव को स्पष्टतया बिना किसी लाग–लपेट के संबंधित परंपराओं को व्यक्त किया है।

2.3 हिन्दी नाटक के विकास में नाटककार मोहन राकेश का स्थान

हिन्दी में नाटक लिखने की परम्परा का सूत्रपात भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र से ही माना गया, क्योंकि इनसे पूर्व 'नाटक' नाम से जो रचनाएं हिन्दी में उपलब्ध होती हैं, उनमें नाट्यकला के तत्वों का अभाव है। भारतेन्दु ने न केवल हिन्दी में मौलिक नाटकों की रचना की अपितु उन्होंने दूसरी भाषाओं की श्रेष्ठ नाट्य रचनाओं के अनुवाद भी किए। इन्होंनें युगीन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर ऐसे नाटकों की रचना का मार्ग प्रशस्त किया जो भारतीय और पाश्चात्य नाट्यकला का समन्वयात्मक रूप प्रस्तुत करते थे। भारतेन्दु युग में मौलिक और अनुदित दोनों प्रकार के नाटकों की धूम रही। एक ओर तो दूसरी भाषाओं के श्रेष्ठ नाटकों की भी रचना की गई। अनूदित नाटक मुख्यतः बंगला, संस्कृत, अंग्रेजी भाषाओं की नाट्य कृतियों पर आधारित हैं। इन अनूदित नाटकों से हिन्दी नाट्य साहित्य को नवीन दृष्टि प्राप्त हुई और हिन्दी में नाट्य रचना का सूत्रपात हुआ। विद्यासुन्दर 1868, रत्नावली 1868, धनंजय विजय 1873, मुद्राराक्षस 1878 आदि अनूदित नाटकों की रचना की। वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति– 1873, सत्य हरिश्चन्द्र–1875, श्री चन्द्रावली–1876, भारत दुर्दशा – 1880, अन्धेर नगरी– 1881, भारत जननी– 1877 आदि मौलिक नाटक लिखे। भारतेंदु जी के नाटकों में सुधारवादी दृष्टिकोण के साथ–साथ राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति हुई है तथा युगीन समस्याओं को जनता तक पहुंचाने की चेष्टा की गई है। उनके नाटक जनकल्याण की भावना से ओत–प्रोत हैं तथा उनका प्रधान स्वर उपदेशात्मक है। अतीत गौरव एवं ऐतिहासिक श्रेष्ठता का प्रतिपादन करने का बीज भारतेन्दु युग में ही पड़ गया था, जिसका विकास प्रसादयुगीन नाटकों में दिखाई देता है। भारतेन्दु ने अपने समय में दर्शकों की रूचि को परिष्कृत करने का प्रयास किया और पारसी थियेटर की व्यावसायिक मनोवृति से उत्पन्न हीन रुचियों, दृश्यों एवं गीतों का प्रबल विरोध किया। लाला श्रीनिवासदास ने श्री प्रह्लाद चरित्र, तप्ता संवरण, रणधीर प्रेम मोहिनी अदि नाटक लिखें हैं। इनमें रणधीर प्रेम मोहिनी–1877 उत्कृष्ट कोटि की रचना है, जिसका नायक अपने शौर्य के बल पर अपनी प्रेमिकाओं को प्राप्त करता है। राधाकृष्णदास ने महारानी पद्मावती, धर्मालाप, महाराणा प्रताप–1897 तथा दुःखिनीबाला आदि नाटक लिखे। 'महाराणा प्रताप' नाटक के द्वारा राणाप्रताप के शौर्य का वर्णन करते हुए राष्ट्रीय भावना उत्पन्न करने का प्रयास किया है। बालकृष्ण भट्ट द्वारा रचित नाटकों में 'दमयन्ती स्वयंवर' वृहन्नला, वेणीसंहार आदि के द्वारा सामाजिक कुरीतियों पर व्यंग्य करने के साथ–साथ अतीत गौरव को भी अभिव्यक्त किया है। गोपाल राम गहमरी ने भी सामाजिक विषयों को लेकर 'देशदशा', 'जैसे को तैसा', 'विद्या विनोद' प्रसिद्ध नाटकों की रचना की। भारतेन्दु युग के नाटकों में ऐतिहासिक, पौराणिक एवं काल्पनिक कथाओं को विषयवस्तु बनाया है। समाज–सुधार, राष्ट्रीय गौरव, अतीत गौरव को नाटकों के माध्यम से दर्शकों में सम्प्रेषित किया है।

भारतेन्दु ने हिन्दी नाट्य साहित्य को जो साहित्यिक भूमिका प्रदान की, उसे जयशंकर प्रसाद ने पल्लवित किया हिन्दी नाट्य क्षेत्र में प्रसाद जी का आगमन वस्तुतः युगान्तर प्रस्तुत करता है। प्रसाद जी के समय तक हिन्दी रंगमंच का पूर्ण विकास नहीं हो सका था, फलतः वे ऐसे नाटकों की रचना में प्रवृत थे जिसके पाठक अधिक हैं, अभिनेय कम। प्रसाद जी ऐतिहासिक नाटकों की रचना करने वाले हिन्दी के प्रमुख नाटककार माने जाते हैं। भारत के अतीत गौरव का चित्रण करने के साथ–साथ उन्होंने राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न करने का प्रयास अपने नाटकों के माध्यम से किया है। प्रसाद जी ने अपने नाटकों के विषय बौद्धकाल, मौर्यकाल एवं गुप्तकाल से चुने हैं जो भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग माना जाता है। विशाख– 1921, अजातशत्रु– 1922, कामना–1924, स्कन्दगुप्त–1928, एक घूंट– 1930, चन्द्रगुप्त– 1931, ध्रुवस्वामिनी–1933 नाटकों के द्वारा अतीत के पट पर वर्तमान का चित्रण किया है तथा इतिहास एवं कल्पना का सन्तुलित समन्वय करने में उन्हें सफलता प्राप्त हुई है। 'ध्रुवस्वामिनी' में प्रसाद जी ने 'नारी समस्या' को प्रस्तुत किया है। तलाक (विवाह–मुक्ति) एवं पुनर्विवाह का अधिकार हिन्दू स्त्री को है या नहीं इस समस्या को बड़े कौशल से उन्होंनें प्रस्तुत किया है। प्रसाद ने अपने नाटकों की भूमिका में नाटक की कथावस्तु के ऐतिहासिक स्रोतों तथा अन्य विवरणों पर विस्तार से प्रकाश डाला है। उन्होंनें अपने नाटकों में भारतीय संस्कृति, जातीय गौरव एवं राष्ट्रीयता के गौरवपूर्ण चित्र अंकित किए हैं। उनके नारी पात्र आदर्श भारतीय रमणी के रूप को प्रस्तुत करते हैं। हिन्दी की ऐतिहासिक नाट्य परम्परा में हरिकृष्ण प्रेमी ने 'रक्षाबन्धन', 'शिवसाधाना', 'विषपान','उद्धार','संरक्षक' आदि नाटकों के द्वारा समाज में चेतना लाई। इनके नाटक राष्ट्रीयता और देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत है तथा रंगमंचीयता एवं अभिनेयता की दृष्टि से भी सफल है। लक्ष्मीनारायण मिश्र जी ने 'संन्यासी','कल्पतरू', 'सिन्दूर की होली' आदि नाटकों के द्वारा प्रेम विवाह, काम और नैतिकता, दाम्पत्य जीवन और प्रणय जैसी अनेक समस्याएं इनके नाटकों की विषय वस्तु बनी है। सेठ गोविन्ददास ने 'प्रकाश', 'सन्तोष कहां', 'त्याग और ग्रहण', 'गरीबी या अमीरी आदि आदर्शवादी नाटकों की रचना की। इन नाटकों में समकालीन समस्याओं–छुआछूत, भ्रष्टाचार, पाखण्ड़, नेताओं की स्वार्थपरता आदि का निरूपण किया है। वृन्दावनलाल वर्मा ने हिन्दी के ऐतिहासिक नाटककारों में भी ख्याति अर्जित की। 'फूलों की बोली', पूर्व की ओर', 'बीरबल', 'ललित विक्रम' आदि ऐतिहासिक नाटक भी लिखें। इसके अतिरिक्त इन्होंनें समस्या प्रधान नाटक भी लिखें जिनमें विवाह, छुआछूत, सामाजिक विषमता आदि का निरूपण किया है। प्रसाद युग में यद्यपि समाज सुधार की प्रवृति को आधार बनाकर नाटकों की रचना की गई हैं। बाल–विवाह, वर्ण व्यवस्था, नारी–स्वातन्त्र्य, धार्मिक अन्धविश्वास जैसी अनेक समस्याओं का चित्रण तत्कालीन नाटकों में हुआ, किन्तु इस काल में ऐतिहासिक नाटकों की रचना करने की ओर विशेष ध्यान किया गया।

प्रसादोत्तर नाटकों का प्रारम्भ हम सन् 1950 ई. से मान सकते है। इस काल के उपरान्त रचित नाटक जीवन के यथार्थ से अधिक जुड़े हुए हैं तथा उनमें रंगमंचीयता एवं अभिनेयता का विशेष ध्यान रखा गया है। देश में स्वतन्त्रता के उपरान्त एक नई चेतना का विकास हुआ तथा जनमानस ने जो अपेक्षाएं की थीं वे भी पूरी नहीं हो सकीं। सर्वत्र स्वार्थपरता, छलकपट, भ्रष्टाचार, अवसरवादिता का बोलबाला हो गया। युवा पीढ़ी दिग्भ्रमित हो गई। बढ़ती हुई बेरोजगारी ने तनाव, संघर्ष एवं अपराधिक प्रवृत्तियों को जन्म दिया। प्रसादोत्तर नाटकों में विष्णु प्रभाकर, जगदीशचन्द्र माथुर, धर्मवीर

भारती, रामकुमार वर्मा, मोहन राकेश, नरेश मेहता, विनोद रस्तोगी, डॉ. शंकर शेष, नरेन्द्र कोहली आदि के नाम उल्लेखनीय है। विष्णु प्रभाकर ने अपने नाटकों में आधुनिक भावबोध से उत्पन्न तनाव एवं जीवन संघर्ष को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। इनके लिखे प्रसिद्ध नाटकों में 'डाक्टर'–1958, 'युगे–युगे क्रान्ति' और 'टूटते परिवेश' के नाम लिए जा सकते हैं। 'युगे–युगे क्रान्ति' में पीढ़ीगत संघर्ष की अभिव्यक्ति है तथा 'टूटते परिवेष' में पारिवारिक विघटन को यथार्थ अभिव्यक्ति मिली है। 'डाक्टर' एक मनोवैज्ञानिक नाटक है जिसमें भावना और कर्तव्य के अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित किया गया है।

जगदीश चन्द्र माथुर ने हिन्दी रंगमंच को एक नई दिशा देने का प्रयास अपने बहुचर्चित नाटकों के माध्यम से किया। 'कोणार्क'–1951, 'शारदीया'–1950, 'पहला राजा'–1969, 'दशरथनन्दन'– 1974 इनके प्रसिद्ध नाटक हैं। 'कोणार्क' नाटक की कथा भुवनेश्वर के कोणार्क मन्दिर के साथ जुड़ी हुई है। 'शारदीया' उनका ऐतिहासिक नाटक है जो मराठों और निजाम के बीच हुए युद्ध की पृष्ठभूमि पर आधारित है। राजनीतिक हथकण्ड़ों से युक्त इस नाटक की कथावस्तु बुनी हुई है तथा शिल्प में पाश्चात्य एवं भारतीय नाट्यकला का समन्वय किया गया है। 'पहला राजा' पौराणिक पृष्ठभूमि से युक्त होने पर भी समसामयिक युगीन सन्दर्भों से जुड़ा हुआ प्रतीकात्मक नाटक है। इस नाटक से लेखक ने विशमतापूर्ण राजनीति एवं शासनतन्त्र की असफलताओं को व्यक्त किया है।

विनोद रस्तोगी ने 'नए हाथ', 'बर्फ की दीवार' में नवीन मान्यताओं का निरूपण किया है। वे एक सफल रेडियो नाटककार भी माने जाते हैं।

लक्ष्मीनारायण लाल एक बहुचर्चित नाटककार हैं। 'अन्धा कुआं'–1955, 'दर्पण'–1963, 'मादा–कैक्टस'–1958, 'मिस्टर अभिमन्यु'–1971, 'अब्दुल्ला दीवाना, एक सत्य हरिश्चन्द्र, सगुन पंछी और 'सबरंग मोह भंग'–1977 इनकी प्रसिद्ध नाट्यकृतियां हैं। पूंजीवाद और भ्रष्टाचार ने किस प्रकार से व्यक्ति को 'चक्रव्यूह' में अभिमन्यु की भांति घेर रखा है, इसका चित्रण मिस्टर अभिमन्यु में हुआ है।

धर्मवीर भारती कृत 'अन्धा युग'– 1954, आधुनिक भावबोध को प्रस्तुत करने वाला गीत–नाट्य है। व्यक्ति को बाह्य संघर्ष ही नहीं आन्तरिक संघर्ष भी झेलने पड़ते हैं और ये आन्तरिक संघर्ष अधिक भयावह होते हैं। 'अन्धा युग' एक सशक्त कृति है जिसमें महाभारत के पात्रों के माध्यम से आधुनिक युग के संत्रास, तनाव, कुण्ठा, अन्तर्द्वन्द्व, आवेश एवं अभिशप्त जीवन को अभिव्यक्त किया है।

मोहन राकेश के नाट्य साहित्य पर उनके व्यक्तित्व, जीवन के अनुभव तथा चिंतन का गहरा प्रभाव है। उनके नाटकों के सन्दर्भ में डॉ. गोविन्द चातक का मत है कि 'वस्तुतः राकेश की उपलब्धि समस्त भारतीय नाटक की उपलब्धि है'। मोहन राकेश ने जब नाट्य लेखन आरम्भ किया तब उनके सामने प्रसाद जी का आदर्श था। मोहन राकेश ने भी सांस्कृतिक पूर्ति के ख्याल से इतिहास को आधार तो बनाया किन्तु समकालीन चेतना से अनुप्राणित करके। समाज के सामने जो प्रश्न थे, उन्हें नाटकों के माध्यम से प्रस्तुत किया। परिवार की आधुनिकता से उत्पन्न प्रश्नों को आधे–अधूरे

में उठाया गया। आधे–अधूरे में गद्यात्मक एवं वस्तुपरक दृष्टि का परिचय मिलता है, किन्तु अंत में भावुकतापूर्ण जीवन–दृष्टि के उन्मेष के कारण यहां भी रूमानियत मुक्त नहीं हो पाती है। 'आषाढ का एक दिन' और 'लहरों के राजहंस' के संबंध मे अपने विचार व्यक्त करते हुए गिरीश रस्तोगी का कहना है कि 'दोनों नाटक इसका प्रमाण है कि मोहन राकेश की लेखनी में अनुशासन और विचारों को सही रूप में व्यक्त करने की अद्‌भुत क्षमता है, पुरानी परिपाटी से हटकर युग के अनुरूप कृति का और हिन्दी नाट्‌यकला को नवीनता देने का श्रेय उन्हें हैं।

हिन्दी रंगमंच और दर्शकों के बीच जो रिक्तता थी, उसे पूर्ण करने का कार्य पिछले तीन दशकों में होता रहा। राकेश के नाटकों में साहित्यिकता के साथ–साथ ही रंगमंच की अपेक्षाओं को ध्यान में रख नाट्‌य–रचना की। राकेश ने नाटकों को विश्व के रंगमंच पर स्थापित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। मोहन राकेश के संबंध में डॉ. धनंजय का यह कथन सर्वथा उपयुक्त है 'युगबोध और जीवन–तत्वों को व्यक्त करने में अतीत का संदर्भ अपना लेने से ऐतिहासिक नाटककार को आसानी तो होती है, लेकिन अंततः उसकी रचना–प्रक्रिया में ऐसे बिन्दु भी आते हैं, जहां उन्हें इतिहास को छोड़कर आगे बढ़ जाना पडता है। अतः संबंधों की सूक्ष्मता प्रदर्शित करते समय अथवा मनःस्थिति विशेष में किए गए व्यवहारों को उद्‌घाटित करते समय तथ्य के प्रस्तुतीकरण की कुशलता नहीं, मानव–प्रवृत्ति को पहचानने की क्षमता की आवश्यकता होती है'।

राकेश जी ने साहित्य को जीवन के विशाल कैनवास पर अंकित किया है। भोगे गए अनुभवों के कारण साहित्य में प्रामाणिकता आ गयी है। वे अपने लेखन में जीवन की विसंगतियों और उनके प्रति आक्रोश को व्यक्त करते है। उनकी रचनाएं जीवन के विस्तृत धरातल पर एक अर्थ खोजती नजर आती हैं। उनके लेखन में मानवीय पीड़ा और तडप को मुख्य स्थान मिला है।

मोहन राकेश आधुनिक काल के सशक्त नाटककार माने जाते हैं। यद्यपि उन्होंने केवल तीन नाटकों की रचना की तथापि संख्या में कम होने पर भी उनके नाटक हिन्दी में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनके नाटकों के नाम हैं– आषाढ़ का एक दिन – 1958, लहरों के राजहंस–1963, आधे–अधूरे – 1969। 'आषाढ़ का एक दिन' महाकवि कालिदास के परिवेश, रचना प्रक्रिया, प्रेरणा स्रोत और उनके चुक जाने से सम्बद्ध कथा को प्रस्तुत करने वाला नाटक है। कालिदास को रचना की प्रेरणा अपने गांव, परिवेश और प्रकृति से प्राप्त होती है। इस प्रेरणा का सबसे प्रभावी स्रोत है मल्लिका, किन्तु राज्याश्रय प्राप्त होने पर कालिदास अपने परिवेश से उखड़ गया। एक परिवेश से कटकर दूसरे से जुड़ पाने का अन्तर्द्वन्द्व साहित्यकार की पीड़ा को उभारता है। 'विलोम' इस नाटक का प्रभवशाली खल पात्र है। यह नाटक रंगमंचीयता की दृष्टि से पूर्ण उपयुक्त नाटक है। 'लहरों के राजहंस' में नन्द और सुन्दरी की कथा महात्मा बुद्ध के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत की गई है। राग–विराग और श्रेय–प्रेय के अंतर्द्वन्द्व की सफल अभिव्यक्ति इस नाटक में प्रस्तुत की गई है। सुन्दरी, नारी–सौन्दर्य को आकषर्ण का चरम बिन्दु मानती है और सौन्दर्य के अंह से ग्रस्त है। नन्द अपनी सुन्दरी पत्नी के प्रति आकृष्ट है, किन्तु वह बौद्ध धर्म के प्रति भी आकृष्ट है। अन्ततः जब 'नन्द' बौद्ध धर्म में दीक्षित होकर मुण्डित मस्तक लिए

हुए घर जाता है तो उस सौन्दर्य गर्विता 'सुन्दरी' का अंह चूर–चूर हो जाता है। इस नाटक में चित्रित नन्द का व्यक्तित्व आधुनिक भावबोध से युक्त संशयशील मानव का प्रतीक है, जो अनिर्णय की स्थिति में रहने के लिए विवश है। 'आधे–अधूरे' मध्यवर्गीय जीवन की विडम्बना को प्रस्तुत करने वाला एक सशक्त नाटक है। नायक 'महेन्द्रनाथ' अपने अधूरेपन को भरने के लिए विवाह करता है, परन्तु नायिका 'सावित्री' जिस पूर्ण पुरुष की तलाश में है, वह महेन्द्रनाथ में नहीं खोज पाती। वह जिन चार पुरुषों के सम्पर्क में आती है, सबको अधूरा ही पाती है और अन्ततः यह सोचने को बाध्य हो जाती है–'सबके सब एक–से हैं'। मोहन राकेश का शिल्प बेजोड़ है। रंगमंच की दृष्टि से ये पूर्ण सफल नाटक हैं। संवाद, भाषा, प्रस्तुतीकरण, दृश्य संकेत, रंग निर्देश, छाया प्रकाश आदि सभी दृष्टियों से वे रंगमंच पर सफलतापूर्वक अभिनीत किए जाने योग्य हैं।

राकेश ने जो कुछ भी लिखा है, उसके केन्द्र में व्यक्ति और उसकी स्थितियां हैं। चिंतन की उनकी मुद्रा में अस्तित्वादियों का प्रभाव स्पष्ट झलकता है, जो निश्चय ही आरोपित नहीं था, वरन् स्वयं के जीवन की असुरक्षा, आंतरिक विक्षोभ, अकेलेपन, अधमरेपन, जीवन की मूल्यता के अहसास को अनुभव किया था। किसी भी रचना में सिर्फ आधुनिक युग से संबंध होने से ही महत्व नहीं हो जाता है। उसमें आधुनिकता की प्रतिष्ठा करने के लिए प्राण–प्रतिष्ठा भी करनी होती है। इस संवेदना के अभाव में नाटक निरर्थक हो जाता है। राकेश जी ने नाटकों में आधुनिकता की अपनी मौलिक दृष्टि, संवेदना और अनुभवों के विधि आयामों के आधार पर हिन्दी नाटक को नया कथ्य और शिल्प प्रदान किया। मानवीय– संबंधों और पात्रों की आंतरिक स्थिति का चित्रण सर्वप्रथम राकेश में ही देखने को मिलता है। राकेश जी प्रसाद के बाद समसामयिक यथार्थवादी नाटककारों में विशिष्ट स्थान रखते हैं, जिन्होंने आधुनिक युग को जीवन की बौद्धिक और मनोवैज्ञानिक व्याख्या का युग स्वीकार किया। इसी का प्रतिपादन अपने साहित्य में किया। उन्होंने परंपरागत पद्धतियों का त्याग करते हुए नवीनता को प्रश्रय दिया। उन्होंने सदा यह ध्यान रखा कि कथावस्तु में एकसूत्रता और क्रमबद्धता हो चाहे न हो, किन्तु वस्तुविधान में स्थितियों में गतिशीलता हो। संवादों में प्रवाहमयता तो हो ही, साथ ही तीव्र व्यंग्य संवदेना से निःसृत हो। नाटक रंगमंच की अपेक्षाओं के अनुकूल हो।

2.4 निष्कर्ष –

मोहन राकेश ने कथ्य को ही नहीं प्रत्युत शिल्प को भी परंपरागत रूढ़ियों से मुक्ति दिलायी। उन्होंने नाटकों के लिए एक नवीन पृष्ठभूमि तलाश की। नाटकों को रंगभाषा प्रदान की। राकेश महानता के उपादान माने जा सकते हैं, जिसके आधार पर यह कहा गया है कि 'राकेश जीवन में रहे हों या न रहे हों, अपने लेखन में मसीहा थे। मसीहा–एक नयी मानवता के दुर्बलों, असहायों और लघु मानव की दुनिया के आधे–अधूरे और टूटे सपनों के सोदागरों के।

2.5 कठिन शब्द–

पृष्ठभूमि, दुर्बल, आधुनिकता, विडम्बना, आकषर्ण, रिक्तता, भावबोध, विघटन, सम्प्रेषित, सूत्रपात।

2..6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 मोहन रोकश के नाटकों के महत्व को स्थापित करें।

प्रश्न 2 मोहन राकेश अन्य नाटककारों से किस प्रकार अलग हैं।

प्रश्न 3 हिन्दी नाटकों की परम्परा में नाटककार मोहन राकेश का स्थान बताइए।

2..7 सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. 'आषाढ़ का एक दिन' – मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटकः उद्‌भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा
3. हिन्दी नाटक और रंगमंचः पहचान और परख – सं. डॉ. इन्द्रनाथ मदान
4. मोहन राकेश की रंग सृष्टि– जगदीश शर्मा
5. मोहन राकेश का नाट्य साहित्यः प्ररेणा एवं स्रोत – डॉ. राजेश्वर प्रसाद सिंह
6. हिन्दी का गद्य साहित्य – रामचन्द्र तिवारी
7. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास – बच्चन सिंह

*****

B.A. HINDI	**Lesson No. 03**
COURSE CODE: HI-601	**B.A. Sem-6th**

मोहन राकेश का साहित्यिक परिचय

3.0 रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 मोहन राकेश का साहित्यिक परिचय

- 3.3.1 नाटक
- 3.3.2 कहानी संग्रह
- 3.3.3 उपन्यास
- 3.3.4 एकांकी
- 3.3.5 लेख एवं निबन्ध
- 3.3.6 यात्रा वृत
- 3.3.7 अनुवाद

3.4 निष्कर्ष

3.5 कठिन शब्द

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.7 पठनीय पुस्तकें

3.1 उद्देश्य – प्रस्तुत पाठ के अध्ययनोपरान्त विद्यार्थी –

–मोहन राकेश के लेखन से परिचित होंगें।

–मोहन राकेश की साहित्यिक विशेषताओं को जान सकेंगें।

–मोहन राकेश के लेखन में रूचि के सम्बन्ध में जान सकेंगें।

3.2 प्रस्तावना –

मोहन राकेश अपने जीवन में अनेक विसंगतियों में गुज़रे हैं। उन्होंने सामाजिक–राजनीतिक विघटनों, स्त्री–पुरुष–संबंधों की शिथिलताओं तथा अकेलेपन, देश का विभाजन जैसी त्रासदियों का अनुभव किया है और इनकी अभिव्यक्ति अपने साहित्य में की है। मोहन राकेश का विश्वास यह भी था, 'लेखक का वास्तविक कमिटमेंट किसी विशेष विचारधारा से न होकर अपने जीवन से एवं अपने हृदय से होता है।'

3.3 मोहन राकेश का साहित्यिक परिचय

बचपन से ही राकेश में एक कलाकार की संभावनाएँ जन्म ले चुकी थीं। शिक्षा का संस्कार तो उन्हें अपने पिता से ही प्राप्त हुआ था। इसी कारण आठवें वर्ष में ही राकेश ने कविताएँ लिखना शुरू कर दीं थीं। इनके द्वारा लिखित कविताएँ उस समय के हिन्दी दैनिक में, बच्चों के कॉलम में प्रकाशित हुई थी। सत्रह साल की आयु में राकेश ने 'समक्ष का फेर' नामक अपना पहला एकांकी लिखा था तदुपरान्त कहानी, नाटक, उपन्यास, डायरी, जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र आदि साहित्य की विविध विधाओं में कलम चलाने लगें।

राकेश का रचना–संसार बदलते भारत के यथार्थ का दस्तावेज़ प्रस्तुत करता है। विभाजन, मोहभंग, विसंगति, टूटे हुए स्त्री–मूल्य, सम्बन्ध, निरर्थकता, अकेलापन, विघटन, राजनीतिक–सामाजिक, भ्रष्टाचार और व्यापक असन्तोष के बीच जी रहे लोगों और उनके यथार्थ से राकेश ने अपनी सृजन भूमिका तैयार की है। इन्होंनें अपने जीवन में जो कुछ भोगा–झेला, उन सबका चित्रण अपनी रचनाओं में किया है। वे लेखन के प्रति पूरे ईमानदार रहे। लेखन के सन्दर्भ में वह अपनी पत्नी अनीता से कहा भी करते थे, "जिन्दगी में पहले नम्बर पर मेरे लिए लेखन है।" राकेश का व्यक्तित्व किसी भी संदर्भ में समझौता नहीं कर पाता था। अनुभूत सत्य के संप्रेषण के सिलसिले में ईमानदारी एवं तृप्त यथार्थ की उष्मा ही उनके लिए प्रमुख रही। जीवन के कटु यथार्थ के संघर्ष से उन्होंने जो शक्ति पाई थी, वही रचनात्मक संदर्भ में पाथेय रही।

3.3.1 नाटक :–

हिन्दी नाटकों में परिवर्तन लाकर मोहन राकेश ने एक नये युग की स्थापना की है। इस सन्दर्भ में डॉ. गोविन्द चातक का मत है 'हिन्दी नटकों की परम्परा में भारतेन्दु और प्रसाद के बाद यदि लीक से हटकर कोई नाम उभरता है

तो मोहन राकेश का।' अपनी नाट्य–कृतियों में उन्होंने बदलते हुए सामाजिक यथार्थ, व्यक्ति सम्बन्ध, स्त्री–पुरुष सम्बन्धों में नए तेवर आदि को अपनी पूरी समग्रता के साथ उभारा है। 'आषाढ़ का एक दिन' (1958), 'लहरों के राजहंस' (1963), 'आधे अधूरे' (1968), 'पैर तले की ज़मीन'(1975) जैसी नाट्य रचनाएँ पर्याप्त दस्तावेज़ हैं।

आषाढ़ का एक दिन :–

राकेश का प्रथम नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' का प्रकाशन सन् 1958 ई. में हुआ। राकेश ने इसमें तीन दशकों के बाद फिर से उस काव्य–तत्व और उन साहित्यिक गुणों को प्रतिष्ठित किया था, जिनको प्रसाद के बाद यथार्थवादी नाट्य–परम्परा ने नाटक से निर्वासित कर दिया था। नाटक के माध्यम से स्वतन्त्र लेखन की अनिवार्यता तथा आश्रित लेखन की बिडम्बना को प्रस्तुत किया है। हिन्दी नाट्य लेखन को एक नयी दिशा तथा एक नयी संवेदना की ओर ले जाने का प्रयास भी किया। दिल्ली, कलकत्ता, लखनऊ, इलाहाबाद, नागपुर, कानपुर, ग्वालियर आदि कई स्थानों में तथा विभिन्न शैलियों में रंगमंच पर 'आषाढ़ का एक दिन' सफलतापूर्वक खेला गया है। आकाशवाणी में विभिन्न केन्द्रों से लगभग सभी भारतीय भाषाओं में उसे प्रसारित भी किया गया है।

'आषाढ़ का एक दिन' का प्रमुख पात्र है– कालिदास। कालिदास इतिहास प्रसिद्ध पात्र है तथा कविकुल गुरु भी। लेकिन इस नाटक में कालिदास की प्रासंगिकता को लेकर कई प्रश्न उठाये गये। क्या राकेश ने ''कालिदास जैसे तपस्वी महात्मा'' को नाटक में एक दुर्बल व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है? नहीं, बिल्कुल नहीं। कालिदास के प्रति राकेश के मन में कोई पूर्वाग्रह नहीं था। नाटककार ने स्पष्ट किया है, 'कालिदास मेरे लिए एक व्यक्ति नहीं, हमारी तुलनात्मक शक्तियों का प्रतीक है। नाटक में वह प्रतीक उस अन्तर्द्वन्द्व को संकेतित करने के लिए है, जो किसी भी काल में सृजनशील प्रतिभा को आन्दोलित करता है।' इससे स्पष्ट होता है कि इतिहास प्रसिद्ध कालिदास के जीवन चरित्र को नहीं, बल्कि तुलनात्मक प्रतिभा के प्रतीक के रूप में उसे स्वीकार करके आधुनिक युग के प्रतिभा–सम्पन्न व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित करना मोहन राकेश का लक्ष्य रहा है।

कालिदास काल्पनिक प्रतिभा का प्रतीक है। अस्मिता पर सचेत कालिदास अपने वातावरण के साथ समझौता न कर पाने के कारण दुविधाग्रस्त भी है। क्योंकि उसे अपने ग्राम प्रान्तर में उचित स्वीकृति नहीं मिलती सब लोग उसे घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इस तरह अपने परिवेश में ही तिरस्कृत कालिदास अपने को तुच्छ एवं निस्सार महसूस करता है। फिर भी उसमें शक्ति है, ताकत है, क्षमता है, प्रतिभा है। ये सब होते हुए भी वह सब प्रकार से आहत होता है। आहत कालिदास के सामने समस्या तभी उठती है जब उसे ऋतुसंहार' नामक कृति पर राज्य की ओर से सम्मान प्राप्त होता है। एक और मल्लिका है, अपनी सृजन–प्रेरणा का ग्राम–प्रान्तर है, वहाँ के हरिण शावक है तो दूसरी ओर राजकीय मुद्राओं का क्रय–विक्रय है, जिसका वह क्रीत कवि बनना नहीं चाहता। इन दोनों के बीच खड़ा कालिदास सही निर्णय पर पहुँचने में असमर्थ होता है। कालिदास अपना ग्राम–प्रान्तर छोड़ना नहीं चाहता। क्योंकि वह अनुभव करता है कि यही ग्राम–प्रान्तर मेरी वास्तविक भूमि है। मैं कई सूत्रों से इस भूमि से जुड़ा हूँ। उन सूत्रों में तुम हो, यह आकाश और ये मेघ

हैं, यहाँ की हरियाली है, हरिणों के बच्चे हैं, पशुपाल हैं। यहाँ से जाकर मैं अपनी भूमि से उखड़ जाऊँगा।'' लेकिन मल्लिका उसे समझाती है, 'तुम यहाँ से जाकर भी मुझसे दूर हो सकते हो ...? यहाँ ग्राम–प्रान्तर में रहकर तुम्हारी प्रतिभा को विकसित होने का अवसर कहाँ मिलेगा? यहाँ लोग तुम्हें समझ नहीं पाते। वे सामान्य की कसौटी पर तुम्हारी परीक्षा करना चाहते हैं।' आगे वह कहती है, 'यह क्यों नहीं सोचते कि नयी भूमि तुम्हें यहाँ से अधिक सम्पन्न और उर्वरा मिलेगी। इस भूमि से तुम जो कुछ ग्रहण कर सकते थे, कर चुके हो। तुम्हें आज उस भूमि की आवश्यकता है, जो तुम्हारे व्यक्तित्व को उचित एवं पूर्ण बना दे।' फिर भी कालिदास के मन में कई–कई आशंकाएं उठती हैं। वह उज्जयिनी की ओर जाने में उत्साहित अनुभव नहीं करता है। मल्लिका उसे पुनः समझाती है, 'अब की उत्साह का अनुभव नहीं होता ... ? विश्वास नहीं तुम यहाँ से जाकर भी यहाँ से अलग नहीं हो पाओगे। यहाँ की वायु, यहाँ के मेघ और यहाँ के हरिण, इन सबको तुम साथ ले जाओगे ...।' अन्ततः मन न चाहने पर भी कालिदास उज्जयिनी जाने के लिए तैयार हो जाता है।

उज्जयिनी पहुँचने पर यद्यपि कालिदास का जीवन बदलता है तो भी वह अपनी सृजनशील प्रतिभा को नहीं छोड़ता है। उन्होंने वहाँ पर भी 'ऋतुसंहार' से भी अधिक प्रसिद्ध 'कुमारसम्भव', 'मेघदूत', 'रघुवंश', 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' जैसी अनेक रचनाओं का सृजन किया। जैसे–जैसे रचना करने की उनकी क्षमता बढ़ती है, वैसे–वैसे उनका व्यक्तित्व भी परिवर्तित होता रहता है। वह गुप्तवंश की परम विदूषी देवी प्रियंगुमंजरी से विवाह कर कश्मीर का शासक हो जाते हैं। कश्मीर का शासन सम्भालने के लिए जाते समय कालिदास अपनी पत्नी प्रियंगुमंजरी के साथ अपने गाँव आता है। लेकिन वह किसी से बिना मिले ही चला जाता है, पर इसी बीच मलिका से प्रियंगुमंजरी की भेंट होती है। वह यहाँ का कुछ वातावरण अपने साथ ले जाना चाहती है। वह कालिदास के जीवन के आरंभिक वर्षों की मल्लिका के घर का परिसंस्कार करना चाहती है। इसी उद्देश्य से वह कहती है, 'देख रही हूँ तुम्हारा घर बहुत जर्जर स्थिति में है। इसका परिसंस्कार आवश्यक है। चाहो तो मैं इस कार्य के लिए आदेश दे जाऊँगी।' लेकिन मल्लिका उसकी उद्धारता को अस्वीकार करती है। आखिर प्रियंगुमंजरी राज्य के किसी एक योग्य अधिकारी से मल्लिका का विवाह कराना चाहती है। इस बात की घोषणा करती हुई वह कहती है, 'तुम उनमें से जिसे भी अपने योग्य समझो, उसी के साथ तुम्हारे विवाह का प्रबंन्ध किया जा सकता है। दोनों योग्य अधिकारी हैं। ... राज्य में ये दो ही नहीं, और भी अनेक अधिकारी हैं। मेरे साथ चलो। तुम जिससे भी चाहोगी ...।' लेकिन किसी भी हालत में मल्लिका उसकी बात नहीं मानती। आखिर वह जिससे घृणा करती थी, जिसे घर से बाहर निकालती थी, उसी के साथ वह शादी करने को मजबूर हो जाती है। उसका नाम है विलोम। विलोम की उपस्थिति मल्लिका को अच्छी नहीं लगती। स्वयं विलोम इस बात को घोषित करता है, ''तुम मुझसे घृणा करती हो, मैं जानता हूँ। परन्तु मैं तुम से घृणा नहीं करता। मेरे यहाँ होने के लिए इतना ही पर्याप्त है।'' जो भी हो, मल्लिका के जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप यह था कि उसको उस आदमी से सम्बन्ध जोड़ना पड़ा, जिसे वह जीवन–भर अयाचित समझती थी। उससे एक बच्ची भी पैदा होती है।

दूसरी ओर कालिदास है, जो कश्मीर में शत्रुओं के आक्रमण होने पर सब कुछ त्यागकर मल्लिका के पास एक टूटा–हारा, थके आदमी के समान लौटता है। परिवर्तनों के बावजूद मल्लिका का द्वार कालिदास के लिए खुला रहता

है। मल्लिका से मिलते समय कालिदास फिर जीवन आरम्भ करना चाहता है, पर जिसके साथ वह जीवन के अर्थ की कल्पना करता है, उसके जीवन का अर्थ टूट चुका होता है। अतएव वह मजबूर होकर लौट जाता है।

इस प्रकार राकेश कालिदास के माध्यम से एक तरफ सृजनात्मक प्रतिभा के अन्तर्द्वन्द्व का पर्दाफाश करते हैं तो दूसरी ओर जीवन की विसंगत परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए अस्तित्वहीन होकर बेसहारा, टूटा हारा बन जाने के लिए अभिशप्त, आधुनिक मानव की त्रासदी को उभारते हैं। दोनों दृष्टियों से आधुनिक संवेदना के संप्रेषण में सफल नाटक है– 'आषाढ़ का एक दिन'।

लहरों के राजहंस :–

मोहन राकेश का दूसरा नाटक है– 'लहरों के राजहंस'। जिसका पहला संस्करण सन् 1963 में निकला। आज इसके अनेक परिवर्तित संस्करण मिलते हैं। संस्कृत के वरिष्ठ कवि 'अश्वघोष' महाकाव्य एवं 'सौन्दरनन्द' से राकेश को यह नाटक लिखने की प्रेरणा मिली। स्वयं नाटककार राकेश ने अपने नाटक की भूमिका में लिखा है, 'कथा का आधार 'अश्वघोष' का 'सौन्दरनन्द' काव्य है, परन्तु विस्तार में स्थितियों का परिक्षेपण करने के कारण यह काल्पनिक भी है।'

कपिलवस्तु का राजकुमार नन्द गौतम बुद्ध का सौतेला भाई है। उसकी पत्नी सुन्दरी परम रूपगर्विता है। रूपासक्त नन्द अपना अधिकांश समय अपनी प्रियतमा की श्रृंगारिकता में व्यतीत करता रहता है। सांसारिक और आध्यात्मिक तत्वों के बीच बड़ा नन्द दुविधा में पड़ता है और सही निर्णय लेने में असमर्थ होता है। नन्द के मन की यही अस्थिरता थी यही संघर्ष नाटक के द्वन्द्व का आधार है।

राकेश ने अपने इस नाटक को तीन अंकों में विभाजित किया है और सुविधा के लिए एक ही रंगमंच की योजना की है। प्रथम अंक में नन्द की पत्नी सुन्दरी की इच्छा से कामोत्सव मनाने का आयोजन हो रहा है। श्वेतांग और श्यामांग इसी काम में लगे हुए हैं। सारे प्रबन्ध समाप्त होने पर सुन्दरी अतिथियों की प्रतीक्षा करती है। लेकिन नन्द के मित्र के अतिरिक्त और कोई नहीं आता। इस पर सुन्दरी अपमान में विक्षुब्ध हो उठती है। इसके साथ प्रथम अंक समाप्त होता है।

द्वितीय अंक में नन्द सुन्दरी का श्रृंगार करते हुए दिखाई देता है। बीच–बीच में नेपथ्य से गौण पात्र श्यामाँग का उन्मादग्रस्त कुन्दन सुनाई पड़ता है, जो सचमुच नन्द के दुविधाग्रस्त मन का ज्वर–प्रलाप है, "कृकोई उपाय नहीं है... कोई मार्ग नहीं है... इन लहरों पर से...यह छाया हटा दो... मुझसे... यह छाया नहीं ओडी जाती है...।" पर वह फिर सांसारिक माया रूपी सुन्दरी के सौन्दर्य में फँस जाता है और अपने आप को सुन्दरी पर अर्षित करता है। इसी बीच बुद्ध भिक्षा के लिए द्वार पर आता है। किन्तु भिक्षा न मिलने पर वह खाली हाथ लौट जाता है। अलका से यह खबर सुनकर नन्द अधिक विचलित हो जाता है। वह अलका से पूछता है, "तुमने ठीक देखा है कि स्वयं भाई...कि स्वयं गौतम बुद्ध भिक्षा के लिए आये थे।" वास्तव में नन्द यहाँ से बुद्ध की ओर झुकने लगता है। बुद्ध के पास आकर वह उससे क्षमा माँगना चाहता है। बुद्ध के पास जाने के लिए सुन्दरी उसे अनुमति देती है।

तृतीय अंक में, नन्द के चले जाने पर सुन्दरी अधिक अस्वस्थ दिखाई देती है। वह अपनी आकुलता प्रकट करती हुई अलका से कहती है कि, ''अब मुझे प्रतीक्षा नहीं है अलका। मैं अपने स्वाभिमान को और नहीं छल सकती। वे जब भी लौटकर आयें, अपने घर में आएंगे, कोई उससे कुछ कहेगा नहीं, और यदि आने में कोई बाधा है, तो...।'' सुन्दरी के मन में जो शंका थी, वह अब तीव्र हो जाती है। अतएव शारीरिक और मानसिक स्तर पर वह अधिक खण्डित और पराजित हो जाती है। आगे नंद जब उँगली में लेप लेकर सुन्दरी के माथे पर बिन्दु बनाता है तो सुन्दरी उसके मुंडित सिर को देखकर भय से चिल्लाती है। ऐसी स्थिति में नन्द अपने को बिल्कुल अकेला, अस्वस्थ एवं असहाय पाता है। अपनी मनोव्यथा व्यक्त करते हुए नन्द कहता है, ''तब नही लगा था, पर अब लगता है कि केश काटकर उन्होंने मुझे बहुत अकेला कर दिया है। घर से और अपने–आपसे भी अकेला। जिस सामर्थ्य और विश्वास के बल पर जी रहा था, उसी के सामने मुझे असमर्थ और असहाय बनाकर फैंक दिया गया है। लगता है मैं चौराहे पर खड़ा एक नंगा व्यक्ति हूँ जिसे सभी दिशाएँ लील लेना चाहती हूँ और अपने को ढकने के लिए उसके पास कोई आवरण नहीं है।'' इसी मानसिक यातना में वह सुन्दरी से बिना कुछ कहे ही चला जाता है। सचमुच नन्द ने अपने मन से दीक्षा ग्रहण नहीं की। बुद्ध के सामने कुछ विरुद्ध कहने में वह असमर्थ था। राकेश ने 'लहरों के राजहंस' के माध्यम से अस्तित्व की व्यथा भोगने वाले आधुनिक मानव की त्रासदी प्रस्तुत की है। भौतिक या अध्यात्मिक जीवन मनुष्य को शान्ति प्रदान करने में असमर्थ है। बल्कि मनुष्य अपने आप में अकेले तथा सारी यन्त्रणाओं को सहते हुए जिन्दा रहने के लिए अभिशप्त है।

आधे अधूरे :–

राकेश का तीसरा नाटक 'आधे अधूरे' का प्रकाशन सन् 1969 ई. में हुआ। अन्य दोनों नाटकों की अपेक्षा इसमें राकेश ने बदलते समकालीन सामाजिक परिस्थिति में विघटित होते मध्यवर्गीय पारिवारिक सम्बन्धों का जीवन्त चित्रण किया है। स्वयं नाटककार इसकी रचना दृष्टि को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं 'आधे–अधूरे' इस शहर के एक मध्यवर्गीय परिवार की कहानी है, जिसे परिस्थितियाँ निचले वर्ग की ओर धकेलती जा रही है।'

'आधे–अधूरे' एक ही परिवार के सदस्यों की कथा है। लेकिन परिवार के अलावा चार अन्य व्यक्तियों का भी उस घर के साथ सम्बन्ध है। वे हैं– सिंघानिया, जुनेजा, जगमोहन तथा मनोज। घर के पाँचों सदस्यों में कोई मेल–मिलाप नहीं है। सावित्री और महेन्द्रनाथ इस नाटक के मुख्य पात्र हैं। नाटक की कथावस्तु इन दोनों के टूटते वैवाहिक सम्बन्धों पर आधारित है। महेन्द्रनाथ पहले अपने दोस्तों के साथ व्यापार कर रहा था। उस समय घर काफी स्वस्थ एवं सन्तुष्ट था। पर जब व्यापार शिथिल हो गया, सारा धन नष्ट हो गया तो घर का सारा बोझ सावित्री के कन्धों पर पड़ गया। सावित्री मशीन की तरह काम करके घर संभालती है। अब महेन्द्रनाथ उसके लिए नालायक और अधूरा है। वह महेन्द्रनाथ से नफरत करती है। सावित्री सोचती है कि महेन्द्रनाथ के स्थान पर यदि कोई दूसरा पुरुष होता तो शायद सब कुछ ठीक चलता। अतः वह अपने पुराने प्रेमी जगमोहन के साथ एक नयी ज़िन्दगी शुरू करने का प्रस्ताव रखती है। पर वहाँ भी वह सफल नहीं होती, क्योंकि वह महसूस करती है, ''सब के–सब... सब–के–सब...एक से। बिलकुल एक से है आप लोग। अलग–अलग मुखौटे, पर चेहरा? चेहरा सबका एक ही।'' आखिर वह पराजित होकर घर लौट आती है।

दूसरी तरफ महेन्द्रनाथ एक मूक निरपेक्ष पशुतुल्य अस्तित्व को झेलता दिखाई देता है, जिस पर एक चुप्पी थोप दी गई है। सावित्री की कमाई पर पलता हुआ बेकार महेन्द्रनाथ दया का पात्र है। कभी जिस घर का वह मालिक था, आज उसी घर में उसकी हालत एक नौकर सी है। महेन्द्र का कथन इस बात का स्पष्टीकरण करता है, ''यहाँ कि जिसे देखो वही मुझसे उलटे ढंग से बात करता है? जिसे देखो वही मुझसे बदतमीज़ी से पेश आता है।'' वह सावित्री के पुरुष–मित्रों को जानते हुए भी, मज़बूर होकर चुप रहता है।

माता–पिता का प्रभाव सन्तान पर अवश्य पड़ता है। 'आधे–अधूरे' इस बात को प्रमाणित करता है। महेन्द्रनाथ और सावित्री की तीन सन्तानें हैं– अशोक, बिन्नी और किन्नी। इनमें अशोक सबसे बड़ा है, जो पिता के समान अस्तित्वहीनता का प्रतीक बनकर रहता है। पिता के व्यक्तित्व की पूरी छाप अशोक पर है। पत्रिकाओं से अभिनेत्रियों की रंगीन तस्वीरें काटना ही उसका एकमात्र काम है। अपने पिता के प्रति उसके मन में करुणा है, माँ के प्रति आक्रोश। वह किसी भी ज़िम्मेदारी को स्वीकार करना नहीं चाहता। एक 'अउट साइडर' की तरह वह उस घर में रहता है।

बड़ी लड़की बिन्नी अपने घर के घुटन–भरे वातावरण से बचने के लिए माँ के पूर्व प्रेमी मनोज के साथ भाग जाती है। पर कुछ ही दिनों के बाद मनोज का साथ न मिलने के कारण वह उसी अधूरे घर में लौट आती है, जहाँ सब के सब अधूरे हैं। तेरह साल की छोटी लड़की किन्नी की हालत भी इससे भिन्न नहीं है। घर में वह किसी से नहीं डरती। माता, पिता, भाई, बहन– सबके सामने कुछ भी कह डालने की वह हिम्मत रखती है। वह कच्ची उम्र में 'काम' सम्बन्धी पुस्तकें पढ़ने तथा यौन सम्बन्धों में रूचि रखती है। वह भी अपनी माँ के व्यक्तित्व के अनुकूल दिखायी पड़ती है।

'आधे अधूरे' नाटक के आरम्भ में ही घर के घर न होने का आभास होने लगता है। इसलिए अशोक माँ से प्रश्न करता है, ''इसे घर कहती हो तुम?'' यह नाटक जहाँ से शुरू होता है, वहीं पहुँचकर समाप्त भी हो जाता है। आरम्भ और अन्त की स्थिति में कोई फर्क नहीं पड़ता। जो पहले था, वह अब भी है– एक बिना पड़ाव का सफर है, जो अपने को ठहराता जाता है। घर है, पर घर में कोई नहीं है। यदि कोई एक घर में होता है तो दूसरा नहीं होता और जब सब होते है तो उनमें संवाद नहीं होता।

इस प्रकार समसामयिक जीवन के यथार्थ तथा मानव जीवन की सच्चाई को गहराई से पहचानने का प्रयत्न 'आधे–अधूरे' में हुआ है। पूर्णता एक कल्पना मात्र है, मनुष्य सब आधे एवं अधूरे बनकर जीने के लिए अभिशप्त हैं। यान्त्रिक सभ्यता ने आधुनिक मनुष्य के सामने इस भीषण यथार्थ को प्रस्तुत किया है। 'आधे अधूरे' सचमुच आधुनिक जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करने वाला नाटक ही है।

पैर तले की ज़मीन :–

'पैर तले की ज़मीन' राकेश का चौथा और अन्तिम नाटक है। इस नाटक को राकेश ने अपने मिशन के पहले ही पूरा किया था। किन्तु नाटक के रूप में वे इसका सिर्फ एक ही अंक लिख पाये और इसी बीच उनकी आकस्मिक मृत्यु हुई। उनके देहान्त के पश्चात् दूसरे अंक की परिकल्पना और नाटक की पूर्ति उनके घनिष्ठ मित्र तथा प्रख्यात

कहानीकार कमलेश्वर ने की। आखिर कमलेश्वर के कठिन परिश्रम से 'पैर तले की ज़मीन' का प्रथम संस्करण सन् 1975 ई. में बाहर आया। 'पैर तले की ज़मीन' दो अंकों में विभाजित किया गया है। दोनों अंकों के मंचीय दृश्य एक 'क्लब' और उसमें स्थित एक 'बार' से सम्बन्धित है

नाटक के आरम्भ में हमें पता चलता है कि पुल टूटनेवाला है, क्योंकि उसमें दरार पड़ गयी है। इसलिए क्लब के बारमैन अब्दुल्ला एवं चपरासी नियामत अपना–अपना हिसाब अतिशीघ्र ठीक करके पुल की दरार ज़्यादा बढ़ने से पहले ही वहां से जाना चाहते हैं। लेकिन तब अब्दुल्ला को मालूम पड़ता है कि क्लब वाली नहीं है। क्लब के सदस्य झुनझुनवाला एवं पंडित ताश व शराब में व्यस्त हैं। नीरा और रीता भी खेलने के लिए वहां मौजूद हैं। अयूब, जिसे कुछ घण्टों पहले शराब पीकर धुत होने के कारण नियामत पुल पार छोड़ आया था, वह अपनी पत्नी सलमा के साथ पुल टूटने से पहले ही क्लब में लौट आया है। इस प्रकार क्लब के सभी सदस्य उसी 'बार' के भीतर इक्ट्ठे हुए है। पुल टूटने की खबर अब्दुल्ला बार–बार दोहराता रहता है, पर कोई भी सुनने के लिए तैयार नहीं है, "किसी को किसी चीज़ की फिक्र नहीं। अपनी जान की भी फिक्र नहीं। अपनी–अपनी मस्ती में, अपने–अपने सूनेपन में खोए हुए ये लोग अन्त में यही पाते हैं कि पुल टूट चुका है, बाढ़ के कारण बिजली फेल हो गयी है, पानी बढ़ते–बढ़ते क्लब के अन्दर आने लगा है और अब क्लब से बाहर निकलना नामुमकिन है।

दूसरे अंक से पता चलता है कि पुल टूटने और बाढ़ के कारण क्लब में फंसे सभी अपनी जान एवं अपना बहुमूल्य सामान समेटे अंधेरे में पानी में टटोल–टटोल कर कहीं किनारे की तलाश में लगे हुए हैं। लेकिन तब भी हर कोई अपने–अपने ढंग पर सोचता है। अयूब के लिए सलमा एक कब्रिस्तान है। अतः वह यह भी अनुभव करता है कि उसकी अपनी ज़िन्दगी भी एक कब्रिस्तान की तरह है। इसलिए वह अपने जीवन के सूनेपन को दूर करने, मरने से पहले रीता दीवान पर जबरदस्ती करता है तो कभी चौदह वर्षीय नीरा के भोलेपन के साथ संबंध जोड़ना चाहता है। इससे वह अपनी पत्नी के अन्दर सोए हुए रेगिस्तान को जगाने में सफल होता है और सलमा भी अयूब से सम्बंध बनाने लगती है। मौत के करीब पड़े होकर पंडित अनुभव करता है कि वह झुनझुनवाला के हाथ का कठपुतला है और उसकी खुशी के लिए जीता रहता है। "इसने हमेशा एक कठपुतले की तरह मुझे साथ रखा है।" अतः वह अब अपने नंगेपन के साथ अपनी इच्छा से मरना चाहता है। अपनी खुशी के लिए दूसरों की खुशी को लूटकर जीवन व्यतीत करने वाला झुनझुनवाला अन्त में पश्चाताप करता है। वह पंडित से कहता है, 'मैं तुम्हारी तरह चाहते हुए भी अपने को बिलकुल नंगा नहीं कर पाऊँगा... क्योंकि मैं अपने नंगेपन को देखने लायक भी नहीं रह गया हूँ। अब जो भी, जैसा कुछ भी है, उसी के साथ मुझे भी मर लेने दो...।' रीता का यही विचार है कि वह जानवरों की तरह मर नहीं सकती। वह मौत के सामने अडिग रहना चाहती है। अब्दुल्ला अपने बच्चे का मुँह देखे बिना तथा नियामत अपनी बूढ़ी माँ को देखे बिना मरना नहीं चाहते। इस प्रकार सब अपने अपने स्थान पर अपने सूने संसार की तरफ झाँकने लगते हैं। तभी पता चलता है कि पानी कम होता जा रहा है। लोग उन्हें बचाने के लिए रस्से फैंक रहे हैं, टॉर्च की रोशनियां कर रहे हैं। धीरे–धीरे सब सूखी ज़मीन पर आ जाते हैं और खतरा टल जाता है।

इस प्रकार 'पैर तले की ज़मीन' में राकेश ने ज़िन्दगी के विभिन्न रूपों को दर्शाने की कोशिश की है। किस वक्त इन्सान की ज़िन्दगी का कौन–सा पहलू खुलने–वाला है, यह सब समय के साथ–साथ ही बदलता है। ज़िन्दगी और मौत के बीच झूलता हुआ मनुष्य क्या–क्या सोचने लगता है, उसकी सही अभिव्यक्ति इस नाटक में की है। किसी को किसी के अन्दर की इन्नोसेन्स की तलाश है तो किसी को एक सम्पूर्ण नारी की तलाश है, किसी को सिर्फ ज़िन्दगी की तलाश है।

अनुभूत यथार्थ का अपना महत्व है, पर इसकी अभिव्यक्ति के लिए विशेष क्षमता की अनिवार्यता है, 'अनुभूति तो स्वाभाविक प्रक्रिया है ही, परन्तु अभिव्यक्ति में स्वाभाविकता लाने के लिए बहुत क्षमता और शिल्प के अधिकार की अपेक्षा है और वह स्वाभाविकता शायद एक रचना की सबसे बड़ी परीक्षा होती है।' लेखक के व्यक्तिगत जीवन का प्रभाव उसके साहित्य में परिलक्षित होना स्वाभाविक है। सामाजिक और पारिवारिक परिवेश की विसंगतियाँ उसके भीतर के कलाकार को जन्म देती हैं।

राकेश अपने जीवन में सबसे अधिक महत्व लेखन को देते थे। इस संबंध में उन्होंने अपनी पत्नी अमीता से कहा भी है, ''ज़िन्दगी में पहले नंबर पर मेरे लिए लेखन है, दूसरे नंबर पर मेरे दोस्त और तीसरे नंबर पर तुम।'' उनका वैयक्तिक जीवन उलझनों में संत्रस्त है। इसलिए वे अपने समस्त साहित्य में मानवीय संबंधों की उलझनों की अभिव्यक्ति करते हुए स्वस्थ मानवीय संबंधों की कामना करते हैं, ''आर्थिक क्रान्ति के साथ–साथ सारी दुनिया में एक और क्रान्ति का होना अनिवार्य है। यह क्रान्ति होगी मानवीय संबंधों में।'' जाहिर है राकेश का लेखन उनके भोगे हुए यथार्थ का लेखा–जोखा है।

1.3.2 कहानी संग्रह

रचना रचनाकार की संचेतना का दस्तावेज़ है। राकेश की कहानियाँ भी इस संचेतना को रूपेक्षित करने वाली अवश्य है। 'युग की सच्चाइयों से जुड़ने की तीव्र लालसा और युग की आत्मा प्रतिध्वनित करने की कामना ने राकेश के कहानीकार व्यक्तित्व को विकासशील चरित्र प्रदान किया, जो सामाजिक–वैयक्तिक धरातल पर बदलते जीवन तथा यथार्थ को आंकता चलता है और साहित्यिक धरातल पर सैद्धान्तिक आग्रहों के स्थान पर सच्चाईयों को अपना संबल बनाता है।'

राकेश मानते हैं कि लेखक का मुख्य दायित्व अपने समय के प्रति है। इसलिए वे वर्तमान जीवन की खोज करते हैं। जीवन की गहरी पहचान और अनुभव की तीव्रता उनकी कहानियों का मुख्य स्वर है। 'वर्तमान भारतीय जीवन जिन संकटों, अन्तर्विरोधों व असंगतियों से गुज़रा है उसका सटीक, वास्तविक और ईंसानियत भरा अभिव्यंजन राकेश की कहानियों में सहज सुलभ है। 'राकेश की कहानियों के अधिकाधिक पात्र अस्थिर चितवाले हैं, जो स्वयं राकेश के जीवन की अस्थिरताओं को प्रतिबिम्बित करते हैं।

राकेश की कहानियों के पाँच संग्रह उनकी कथायात्रा के अनुसार ये हैं– 'इन्सान के खण्डहर' (1950), 'नये बादल'(1957), 'जानवर और जानवर'(1958), 'एक और ज़िन्दगी'(1961) तथा 'फौलाद का आकाश'(1966)। इन संग्रहों

की कहानियों को राकेश ने पुनः चार नये नामों से प्रकाशित किया है। जैसे 'आज के सायें'(1967), 'रोयें–रेशे'(1968), 'एक–एक दुनिया'(1968) एवं 'मिले जुले चेहरे'(1969)।

इन्सान के खण्डहर :– राकेश का प्रथम प्रकाशित कहानी संग्रह है 'इन्सान का खण्डहर'। इसमें उनकी 'इन्सान का खण्डहर', 'धुँधला दीप', 'मरूस्थल', 'ऊर्मिल जीवन', 'एक आलोचना', 'लक्ष्यहीन', 'कंबल', 'दोराहा', 'वासना की छाया में' तथा 'मिट्टी के रंग' कहानियाँ संग्रहित हैं।

'इन्सान के खण्डहर' की कहानियों के रचनाकाल में राकेश निर्वासन और विद्रोह के भाव से ग्रस्त थे। उस समय की अपनी मनोदशा के संबंध में राकेश ने स्वयं कहा है, ''उन दिनों कई कारणों से मैं अपने को तब तक के परिवेश से बहुत जुड़ा हुआ महसूस करता था। जिन व्यक्तियों और संस्कारों के बीच पलकर बड़ा हुआ था, उनके खोखलेपन को लेकर मन में गहरी कटुता और वितृष्णा थी। घर की पूरी ज़िम्मेदारी सिर पर होने से उसे निभाने की मज़बूरी से मन छटपटाता था। मैं किसी तरह अपने को विरासत के सब संबंधों से मुक्त कर लेना चाहता था, परन्तु मुक्ति का कोई उपाय नहीं था। छोटा भाई इतना छोटा था, बड़ी बहन इतनी संस्कारग्रस्त और माँ इतनी असहाय कि मेरी स्वतंत्रता की भूख कोरी मानसिक उड़ान के सिवा कुछ महत्व नहीं रखती थी। मेरी शुरू की कहानियाँ इसी मानसिकता की उपज थी।''

'इन्सान के खण्डहर' कहानी में एक चरित्रहीन पुरुष के अत्याचार और भ्रष्टाचार का चित्रण है। 'वासना की छाया में' कहानी की पुष्पा बूढ़े पिता की वासना का शिकार होने की त्रासदी लेकर जी रही है। उसका बूढ़ा पिता उसे किसी को सौंपकर बदले में किसी जवान लड़की से ब्याह करना चाहता है। इस मानसिक तनाव को झेलने की विवशता से पुष्पा का जीवन संत्रस्त है। 'लक्ष्यहीन', 'दोराहा' और 'धुँधला दीप' कहानियों के नायक जीवन में निराश हैं। 'मरुस्थल' कहानी का धनपतराय लखपति बनने के लोभ में अपनी बेटी इन्दु को डाक्टर न बनाकर सेठों के सामने नचाता हैं। 'ऊर्मिल जीवन' की सत्रह वर्षीय नीरा अपने जीजा से शादी करने के लिए विवश होती है। 'कम्बल' आर्थिक विपन्नता से उत्पन्न घुटन भरे परिवार की कहानी है। नायक रामसरन देश–विभाजन की विभीषिका का शिकार है जो अपने परिवार के साथ शरणार्थी कैंप में आर्थिक अभाव झेलता है। 'मिट्टी के रंग' महायुद्ध की विभीषिका और मानवीय प्रेम–संबंधों की पृष्ठभूमि में लिखी गई कहानी है।

नये बादल :–

' नये बादल' राकेश का दूसरा कहानी संग्रह है जिसका प्रकाशन सन् 1857 ई. में हुआ। 'नये बादल' तेरह कहानियों का समूह है– 'नये बादल', 'मलबे का मालिक', 'अपरिचित', 'शिकार', 'उसकी रोटी', 'मंदी', 'हवा मुर्गे', 'उलझते धागे', 'सौदा', 'फटा हुआ जूता', 'भूखे' और 'छोटी सी चीज़' आदि

राकेश ने स्वयं वैयक्तिक और सामाजिक संदर्भों की खोज के साथ–ही–साथ जीवन के गहरे यथार्थ का साक्षात्कार करने का प्रयास भी किया है। उनके 'नये बादल' संग्रह की कहानियों में युगीन सामाजिक यथार्थ और सत्य

का बदलता स्वरूप अभिव्यक्त हुआ है। 'नये बादल' में स्त्री–पुरुष–संबंधों के बदलते तेवर तथा रुद्र मानसिकता पर व्यंग्य करने की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है।

'मलबे का मालिक' देश–विभाजन की विभीषिका से उत्पन्न मानवीय ट्रेजेडी की कहानी है। 'मंदी' में पहाड़ पर 'ऑफ सीज़न' में दिखाई पढ़ने वाली मंदी तथा उससे उत्पन्न जीवन की उदासी का मार्मिक चित्रण है। 'उसकी रोटी' में अपने पति ड्राइवर सुच्चा सिंह के लिए रोटी लेकर इन्तज़ार करती हुई बालो की मानसिक पीड़ा का चित्रण है। 'अपरिचित' में एक सफर में दो अपरिचितों के धीरे–धीरे बनते रागात्मक संबंध को मूर्त किया गया है। 'शिकार' में पटवर्द्धन के अत्याचार का चित्रण है। 'फटा हुआ जूता' में आज की घुटन, कुण्ठा और आर्थिक विषमताओं की सूक्ष्म प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति हुई है। 'उलझते धागे' भी निम्न वर्ग की आर्थिक विषमता से उत्पन्न तनाव की कहानी है।

जानवर और जानवर :–

' जानवर और जानवर' राकेश का तीसरा कहानी–संग्रह है, जिसका प्रकाशन सन् 1958 ई. में हुआ। इसमें 'जानवर और जानवर', 'रोज़गार', 'परमात्मा का कुत्ता', 'मवाली', 'आर्द्रा', 'आखिरी सामान' आदि कहानियाँ संग्रहित हैं।

राकेश अपने वैयक्तिक जीवन में आर्थिक कठिनाईयों से बहुत पीड़ित थे। 'जानवर और जानवर' कहानी–संग्रह में भी इसी विवशता का स्वर दिखाई पड़ता है। आर्थिक विषमताओं, जीवन की विडंबनाओं एवं विसंगतियों के बावजूद निम्न–मध्यवर्गीय लोग जीवन में आस्था रखते हैं यानि उनमें जिजीविषा बनी रहती है। 'जानवर और जानवर' कहानी संग्रह के बहुत सारे पात्र इसी मानसिकता की उपज हैं।

'परमात्मा का कुत्ता' में सरकारी व्यवस्था का खोखलापन, भीषण–ग्रस्त वातावरण तथा उन्हें तोड़ने के लिए तड़पते आदमी का चित्रण हुआ है। 'आर्द्रा' एक ऐसी माँ की कहानी है, जो भिन्न मानसिकता एवं आर्थिक स्थिति वाले पुत्रों के बीच रहने के लिए विवश हो जाती है। 'आखिरी सामान' की मिसेज़ भण्डारी की विवशता कुछ ऐसी आधुनिक नारियों की है जिन्हें अपने पति की पदोन्नति के लिए उनके अधिकारियों की वासनापूर्ति का शिकार बनना पड़ता है। 'रोज़गार' की मिस दारूवाला को अपनी आर्थिक विवशता से 'कॉल गर्ल' बनना पड़ता है। 'मिस्टर भाटिया' में एक बेकार युवक की महत्वाकांक्षा का तथा आत्म–निर्वासित होने की विडंबना का चित्रण हुआ है। 'ब्लेम' भारत – पाक विभाजन में बरबाद हुए लोगों की कहानी है।

एक और ज़िन्दगी

राकेश का चौथा कहानी संग्रह है 'एक और ज़िन्दगी'। इसका प्रकाशन सन् 1961 ई. में हुआ। 'सुहागिनें', 'आदमी और दीवार', 'इक हलाल', 'गुनाह बेलज्जत', 'जीनियस', 'बस स्टैंड की एक रात', 'मिस पाल', 'वारिस' तथा 'एक और ज़िन्दगी' नामक कहानियाँ इसमें संग्रहित हैं।

इस संग्रह के प्रकाशन के समय तक राकेश प्रथम विवाह–संबंध तथा नौकरी से मुक्ति पा चुके थे। उनके लिए सारे मानवीय संबंध निरर्थक सिद्ध हो चुके थे और उनके मन में निरर्थकता एवं अकेलेपन की पीड़ा का संघर्ष शुरू हो चुका था। अतः 'एक और ज़िन्दगी' संग्रह में उनका भोगा हुआ यथार्थ अनावृत हुआ है।

फौलाद का आकाश :–

सन् 1966 ई. में प्रकाशित राकेश का अन्तिम कहानी–संग्रह है 'फौलाद का आकाश'। इसमें 'ग्लास टैंक', 'पाँचवें माले का फ्लैट', 'सेफ्टी पिन', 'सोया हुआ शहर', 'जंगल', 'ज़ख्म', 'चौगान', 'फौलाद का आकाश' और 'एक ठहरा हुआ चाकू' कहानी संग्रहित हैं। गहरी–जीवन की भयावहता के अतिरिक्त व्यक्ति के अस्तित्व की व्यथा, अकेलापन आदि इस संग्रह की कहानियों की मूल–संवेदना है।

राकेश के देहांत के उपरान्त कमलेश्वर ने उनकी प्रारंभकालीन कहानियों को 'एक घटना तथा अन्य कहानियाँ' नाम से सन् 1974 ई. में प्रकाशित किया। इसमें 'नन्हीं', 'भिक्षु', 'मन्दिर–मन्दिर की देवी', 'सतयुग के लोग', 'चाँदनी और स्याह दाग', 'एक घटना', 'बनिया बनाम इश्क', 'कटी हुई पतंगें', 'लड़ाई', 'गुमशुदा', 'अर्द्धविराम' और 'लेकिन इस तरह' संग्रहित हैं।

3.3.3 उपन्यास

मोहन राकेश ने अनेक उपन्यासों की रचना की। उनके प्रकाशित उपन्यासों में 'अन्धेरे बन्द कमरे'–1963, 'न आने वाला कल'– 1968 'अन्तराल'–1972, अधिक लोकप्रिय हैं। 'स्याह और सफेद', काँपता हुआ दरिया', 'नीली रोशनी की बाहें' तथा 'मंसल' उनके प्रकाशनधीन उपन्यास हैं।

3.3.4 एकांकी

1 अण्डे के छिलके
2 प्यालियाँ टूटती हैं
3 बहुत बड़ा सवाल
4 शायद
5 छतरियाँ
6 दूध और दाँत
7 सिपाही की माँ
8 रात बीतने तक
9 ध्वनि नाटक
10 स्वप्नवासदत्तम
11 सुबह से पहले
12 कवाँरी धरती
13 उसकी रोटी

3.3.5 लेख एवं निबन्ध

निबन्ध लेखन पर मोहन राकेश की तीन पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं– (1) परिवेश–1967 (2) बकलम खुद – 1974 (3) मोहन राकेश साहित्यिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि। इसके अतिरिक्त विभिन्न पत्र– पत्रिकाओं में भी समय–समय पर सामयिक प्रसंगों पर उनके लेख प्रकाशित होते रहें हैं।

3.3.6 यात्रा वृत

मोहन राकेश का पहला यात्रा –वृतान्त 'आखिरी चट्टान तक' है। इसमें गोवा से कन्याकुमारी तक की यात्रा का वृतान्त है। दूसरा यात्रा वृतान्त 'ऊँची झील' है।

3.3.7 अनुवाद

मोहन राकेश ने संस्कृत से 'मृच्छकटिक' नाटकों का अनुवाद किया है और अंग्रेजी से हिन्दी में 'एक औरत का चेहरा' तथा 'हिरोशिमा के फूल का अनुवाद किया है।

3.4 निष्कर्ष :–

जाहिर है कि राकेश का रचना–क्षेत्र विशाल एवं अनोखा है। नाटक, उपन्यास, कहानी जैसे बृहत्तर रचना–क्षेत्र को अपनाते हुए वैयक्तिक जीवन की त्रासद स्थिति का चित्रण राकेश ने किया है। मोहन राकेश का साहित्य, आधुनिक युग विशेष की सारी विडम्बनाओं को झेते हुए ज़िन्दा रहने के लिए अभिशप्त आधुनिक मानव की गाथा कहता है। निस्सन्देह इनका व्यक्तित्व अन्तर्विरोधों, आत्मसंघर्षों एवं पारिवेशिक प्रताड़नाओं की अग्नि में तपकर निखरा हुआ अवश्य है। वे युग–चेता कलाकार थे। उनकी रचनाएँ अपनी इस संचेतना का दस्तावेज़ ठहरती हैं।

3.5 कठिन शब्द–

अन्तर्विरोध, आत्मसंघर्ष, विडम्बना, वैयक्तिक, परिसंस्कार, अर्शित, उन्मादग्रस्त, अभिशप्त, यथार्थ, विभीषिका, विसंगति, विषमता, पटवर्द्धन

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 मोहन राकेश के लेखन का परिचय दीजिए।

प्रश्न 2 मोहन राकेश के लेखन की विशेषताएं बताइए।

प्रश्न 3 मोहन राकेश की साहित्यिक रचनाओं का परिचय दीजिए।

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. 'आषाढ़ का एक दिन' – मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटकः उद्‌भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा
3. हिन्दी नाटक और रंगमंचः पहचान और परख – सं. डॉ. इन्द्रनाथ मदान
4. मोहन राकेश की रंग सृष्टि– जगदीश शर्मा
5. मोहन राकेश का नाट्य साहित्यः प्रेरणा एवं स्रोत – डॉ. राजेश्वर प्रसाद सिंह
6. हिन्दी का गद्य साहित्य – रामचन्द्र तिवारी
7. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास – बच्चन सिंह

*****

'आषाढ़ का एक दिन' की समीक्षा

4.0 रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 'आषाढ़ का एक दिन' की समीक्षा

4.4 निष्कर्ष

4.5 कठिन शब्द

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.1 उद्देश्य – प्रस्तुत पाठ के उपरान्त विद्यार्थी–

– 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के भाव पक्ष का बोध प्राप्त कर सकेंगें।

– 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक से संबंधित भाषा को समझ सकेंगें।

– 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक से संबंधित प्रतीकों को समझ सकेंगें।

4.2 प्रस्तावना –

नाटक का कथानक कालिदास और उनकी प्रेमिका मल्लिका के इर्द–गिर्द घूमता है। विलोम कालिदास का स्वघोषित मित्र है और कुछ आलोचनात्मक समीक्षाओं में इसे नाटक का खलनायक भी कहा जा सकता है। विलोम को स्थान–स्थान पर उलहाना का भी सामना करना पड़ा है और समय–समय पर नायक के आदर्शवाद

को दिखाने के लिए भी विलोम का प्रयोग किया गया है। ऐसा कहा जा सकता है कि इस नाटक में कालिदास आदर्शवाद के प्रतीक है और यथार्थवाद से उनकी कशमकश का अन्य पात्रों पर पड़ने वाले प्रभाव को राकेश ने बखूबी दर्शाया है। वहीं दूसरी और विलोम को भी यर्थाथवाद का प्रतीक माना जा सकता है, उसकी बातें और उसके द्वारा उठाये गए कदम समाज की चलती हुई परिपाटी द्वारा प्रमाणित कदम माने जा सकते है और परिस्थितियों के आगे विवश होकर मल्लिका को भी अंत में यथार्थ के आगे नतमस्तक होना ही पड़ता है।

4.3 'आषाढ़ का एक दिन' की समीक्षा

'आषाढ़ का एक दिन' मोहन राकेश का पहला और महत्त्वपूर्ण नाटक है। इतिहास सिद्ध कालिदास की रचनाओं को पढ़कर, उसके आधार पर 'सृजनात्मक प्रतिभा' तथा 'राजाश्रय' की समस्या को इस नाटक में स्वरूप मिला है। कालिदास एक महान कवि थे। उज्जैन के राज्य द्वारा राजकवि का सम्मान उन्हें दिया गया। इसी प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् कुछ एक हिन्दी साहित्यकारों को भी राजाश्रय मिला। मोहन राकेश ने तत्कालीन युगबोध को समझा और 'राजाश्रय' तथा 'सृजनात्मक प्रतिभा' के मध्य चलते द्वन्द्व को अनुभव किया। तत्कालीन साहित्यकारों तथा कालिदास को एक ही समस्या के धरातल पर रख कर उसे सृजनात्मक प्रतिभा का प्रतीक माना और 'आषाढ़ का एक दिन' की रचना की। जातीय प्रतीकों का मानवीय धरातल पर निदर्शन, भावना और कर्म की टकराहट इस नाटक का प्राण है। इसी कारण हिन्दी के अच्छे नाटकों में इसकी गणना की जाती है। शासन प्रणाली में फैली उदासीनता, निष्क्रियता और निरर्थक शोधकार्यों पर गहरा कटाक्ष करने में नाटककार सफल हुआ है। जीवन के यथार्थ की कटुता तथा आज के जीवन मूल्यों का मूल्यांकन इस नाटक की उपलब्धि है। पात्रों की सजीवता और कार्य व्यापार में, सूक्ष्म रंग संकेतों के निर्देशन तथा यथार्थवादी रंगशैली में नाटकार की रंगचेतना का प्रमाण मिलता है। 'आषाढ़ का एक दिन' में प्रयुक्त भाषा रंगमंचीय संप्रेषण में समर्थ है।

पात्रानुरूप भाषा का प्रयोग हुआ है। संवाद, छोटे–छोटे, उत्तार–चढ़ाव व लय के सभी पक्षों को ध्यान में रखकर प्रयुक्त किए हैं। डॉ. इन्द्रनाथ मदान का मत है कि इसकी भाषा नाटकीयता लिए हुए है। मानो ऐसा प्रतीत होता है कि 'आषाढ़ का एक दिन' की भाषा सांचे में ढल कर निकली है। कहीं कोई भी शब्द निरर्थक या अधिक नहीं लगता है। किसी भी शब्द को उसके स्थान से हटाया या हिलाया नहीं जा सकता है और न ही बढ़ाया या घटाया जा सकता हैं। नपे–तुले अंदाज में संवादों का सटीक प्रयोग नाटककार की रंगचेतना का साक्षी है। कहीं–कहीं सृजनात्मक भाषा व्यंग्य को ज्वलंत रूप में प्रकट करती है। इस प्रवृति के कारण पूरा परिवेश अर्थात् कालिदास कालीन भारत सजीव हो उठता है। इसके लिए नाटककार ने तल्प, आस्तरण, उपत्यका, अग्निकाण्ठ जैसे तत्सम् शब्दों का प्रयोग किया है। नाटककार ने कठिन शब्दों का प्रयोग भी इस भांति किया है ताकि अर्थ स्वयं ही समझ में आ जाए ।

नाटक के आरम्भ में ही मल्लिका द्वारा प्रकृति के सौन्दर्य का मनोहारी वर्णन मिलता है। अपनी चित्रात्मक बिम्ब प्रधान शैली में ग्राम प्रान्तर का बिंब राकेश ने कुछ ऐसा रचा है कि केवल शब्दों के माध्यम से ही प्रकृति के नैसर्गिक

वातावरण की अनुभूति हो जाती है। वस्तुतः मोहन राकेश ने हिन्दी नाटक को एक नई नाट्य–भाषा दी है। राकेश के द्वारा नाट्यशब्दों की रंग सार्थकता हिन्दी नाटक को अद्भुत देन है।

प्रत्येक पात्र की जीवन दृष्टि उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा से ज्ञात होती है। जैसे 'अम्बिका' कर्म और यथार्थ की प्रतीक है तो उसकी हर चेष्टा और शब्द से नाटककार ने उसके व्यक्तित्व को मुखर बनाया है। जैसे : '**...** किसी सम्बन्ध से बचने के लिए अभाव जितना बड़ा कारण होता है, अभाव की पूर्ति उससे बड़ा कारण बन जाती है।**...** मैं ऐसे व्यक्ति को अच्छी तरह समझती हूँ। तुम्हारे साथ उसका इतना ही संबंध है कि तुम एक उपादान हो, जिसके आश्रय से वह अपने से प्रेम कर सकता है, अपने पर गर्व कर सकता है। परन्तु तुम क्या सजीव व्यक्ति नहीं हो? तुम्हारे प्रति उसका या तुम्हारा कोई कर्त्तव्य नहीं है? कल तुम्हारी मां का शरीर नहीं रहेगा और घर में एक समय के भोजन की व्यवस्था भी नहीं होगी, तो जो प्रश्न तुम्हारे सामने उपस्थित होगा, उसका तुम क्या उत्तर दोगी? तुम्हारी भावना उस प्रश्न का समाधान कर देगी? फिर कह दो कि यह मेरी नहीं, विलोम की भाषा है।' प्रस्तुत संवाद उसके यथार्थवादी दृष्टिकोण तथा जीवन यथार्थ की कटुता को सफलता से व्यंजित करता है। इसके विपरीत मल्लिका की भावनात्मक, कल्पनाशील दृष्टि को प्रस्तुत करने के लिए बिल्कुल अलग भाषा प्रयुक्त की है। जिसमें उसे काल्पनिक धरातल पर जीते हुए महसूस किया जा सकता है।

अनुस्वार तथा अनुनासिक के संवादों में दफ्तरी माहौल, शासन के कर्मचारियों की अकर्मण्यता और केवल फाइलों पर नोटिंग–ड्राफ्टिंग अर्थात् 'कागजी कार्यवाही' को करते रहने की प्रक्रिया को सुन्दर अभिव्यक्ति मिल सकी है। रंगिणी व संगिनी के संवादों के माध्यम से आजकल के शोध अध्ययन पर भी करारा व्यंग किया है। नाटक में कालिदास और विलोम की भाषा उनके व्यक्तित्व के दोहरेपन को सशक्त ढंग से उजागर करती है।

नाटक के अंतिम अंक में कालिदास तथा मल्लिका के स्वगत कथन लम्बे होते हुए भी उबाते नहीं हैं। इसका कारण कथ्य के अनुरूप उनकी संयोजना है। इन स्वगत कथनों की रचना नाटककार की संवेदनात्मक अनुभूति से हुई है। जिससे उनमें भरपूर कसक, पीड़ा, वेदना और छटपटाहट भरी हुई है। यही कारण है कि मल्लिका के भौतिक पतन के वाजूद उससे सहानुभूति होती है और कालिदास के प्रति आक्रोश हो जाता है। दूसरी ओर कालिदास का अन्तर्द्वन्द्व मंच पर घटित नहीं होने से उसका कथन मल्लिका की अपेक्षा कम संवेदना जगाता है।

नाटक में कुल बारह पात्र हैं जिनमें से रंगिनी, संगिनी, अनुस्वार, अनुनासिक तथा निक्षेप की छोटी–छोटी परन्तु बड़ी महत्वपूर्ण भूमिकाएं हैं। मल्लिका नाटक में हर समय छाई रहती है क्योंकि वह एक पल को भी मंच से ओझल नहीं होती। कालिदास नाटक का मुख्यपात्र है परन्तु मंच पर उसके अन्तर्द्वंद्व को घटनात्मक रूप से अभिव्यक्ति नहीं मिल पाने के कारण कहीं दुर्बल पड़ गया है लेकिन अन्त में प्रेक्षकों और पाठकों में आक्रोश मिश्रित संवेदना अवश्य जगा देता है।

कालिदास को मोहन राकेश ने 'सृजनात्मक प्रतिभा' का प्रतीक माना है। यह नाटक एक साहित्यकार के अन्तर्मन के द्वंद्व तथा परिवेश की समस्याओं से प्रभावित उसकी रचनाधर्मिता के महत्वपूर्ण पहलुओं पर प्रकाश डालता है चाहे वह इतिहास प्रसिद्ध कालिदास रहा हो या आज का रचनाकार। उदात लोगों में भी मानवीय दुर्बलताएं होती हैं क्योंकि वे इन्सान होते हैं– इस सच्चाई को भी इस नाटक के माध्यम से कलात्मक अभिव्यक्ति मिल सकी है।

मल्लिका रोमांटिक बोध का प्रतीक है। भावना लोक की कोमलता में विचरती हुई जीवन यथार्थ की कठोरता से टकराने पर वह भौतिक रूप से टूट कर भी भावना के धरातल पर जीवित रहती है। मोहन राकेश के अनुसार, 'मल्लिका का चरित्र एक प्रेयसी और प्रेरणा का ही नहीं, भूमि में रोपित उस स्थिर आस्था का भी प्रतिनिधित्व करता है जो ऊपर से झुलस कर भी अपने मूल में विरोपित नहीं होता।'

विलोम इस नाटक का बड़ा जीवन्त और सशक्त पात्र है। वस्तुतः कालिदास के प्रतिद्वंद्वी के रूप में उसकी सृष्टि की गई है और जिसके माध्यम से कालिदास के व्यक्तित्व का मानवीय रूप उभर सका है। विलोम अपने नाम से ही अपने प्रतीकार्थ को स्पष्ट कर देता है। वह दुराग्रह तथा आक्रामक शक्तियों का प्रतिनिधि है, जिसने सिर्फ छीनना जाना है। वह मल्लिका को उतना नहीं चाहता जितना यह कि कालिदास मल्लिका को न चाहे। विलोम वह पात्र है जिसने अपने अर्न्तद्वंद्व को खा लिया है। एक सपाटपन और कटुयथार्थ ही उसके व्यक्तित्व की दिशा है।

अम्बिका निरन्तर कर्म करती हुई अपनी यरथार्थवादी चेतना को व्यंजित करती है। अंबिका और विलोम रंगमंच की दृष्टि से महत्वपूर्ण पात्र हैं। इन पात्रों के द्वारा नाटक में तनाव और संघर्ष की नाटकीय स्थितियां निर्मित हुई हैं जो नाटक को तेजी से गति देती हैं। नाटक की भाववस्तु में कई समस्याएं उठाई गई हैं– जैसे सृजनात्मक प्रतिभा और राजाश्रय, कलाकार और प्रेम की समस्या, कलाकार और उसके परिवेश की समस्या, यथार्थ और भावना का विरोध, नौकरशाही में चलती कागजी कार्यवाही, शोध के नाम पर किए जा रहे निरर्थक काम इत्यादि। इस नाटक में आरम्भ से अंत तक गहरे नाटकीय संघर्ष की योजना की गई है। नाटक के आरम्भ में ही अंबिका और मल्लिका की टकराहट संघर्ष की सृष्टि करती है। उसके बाद मृगशावक का प्रसंग, कालिदास के उज्जैन जाने का प्रसंग, विलोम के तीक्षण व्यंग्य, प्रियंगुमंजरी का अकेले ही मल्लिका के यहां आना और घर के परिसंस्कार की बातचीत, मातुल द्वारा कालिदास के कश्मीर छोड़ने व सन्यासी बनने की सूचना और फिर मल्लिका का अर्न्तद्वन्द्व तत्पश्चात् अचानक कालिदास का लौट आना और चले जाने तक की स्थिति तीखे संघर्ष और गहरे तनाव से गुंथी हुई है। नाटक में शुरू से अंत तक तनावपूर्ण स्थिति बनी रहती है और अंत में गहरे नाटकीय तनाव में ही यह नाटक समाप्त भी हो जाता है।

तनावपूर्ण वातावरण को कुछ समय के लिए हल्का बनाने के लिए शिष्ट हास्य की योजना नाटककार की प्रेक्षक चेतना का बड़ा सटीक उदाहरण है। इसके लिए कभी मातुल, कभी अनुनासिक–अनुस्वार तो कभी रंगिनी और संगिनी को मंच पर लाया गया है। ये पात्र प्रेक्षकों और पाठकों का मनोरंजन तो करते ही हैं साथ ही साथ समाज के पाखण्ड और खोखलेपन को भी उजागर करते हैं। इस योजना में नाटककार पूर्णतया सफल हुआ है। इस नाटक का प्रदर्शन देखते हुए दो तीन घंटे तक लगातार प्रेक्षक मानसिक तनाव में न रहे इसीलिए इन पात्रों की सर्जना मोहन राकेश ने की है। यह उनकी प्रेक्षक और रंगचेतना दोनों का ही प्रमाण है।

'आषाढ़ का एक दिन' की कथावस्तु तीन अंकों में एक ही दृश्यवंध पर निर्मित की गई है। अंकों के मध्य में 'कुछ वर्षो के अनन्तर' और 'कुछ और वर्षों के अनन्तर' का रंग निर्देश देकर समय अन्विर्ति की रक्षा की गई है। इस

कालावधि को और भी स्वाभाविकता देने हेतु मल्लिका के प्रकोष्ठ की मंचसज्जा की वस्तुओं को धूमिल, उनकी जीर्णता, क्षीणता आदि के रंग निर्देश दिए हैं। नाटक की सारी भाववस्तु मल्लिका के प्रकोष्ठ में ही स्वरूप लेती है। स्थानान्तार घटनाओं की जानकारी पात्रों के संवादों और सूचनाओं के माध्यम से दिलवायी गई है।

नाटककार द्वारा दिए गए सूक्ष्म रंग संकेत उसकी रंगचेतना को दर्शाते हैं। पात्रों की जीवन दृष्टियों को उजागर करने वाले कार्य–व्यापार के रंगसंकेत, वातावरण निर्माण हेतु रंग संकेतों के रंग संकेत, अंक–दृश्य के रंग संकेत, प्रतीकात्मक मंचसज्जा आदि के रंग सकेत, इस नाटक की संरचना के अभिन्न अंग बनकर आए हैं। इनसे नाटक में प्रभावोत्पादकता की सृष्टि हुई है।

प्रत्येक पात्र के सूक्ष्मतम मनोभावों को अभिव्यक्ति देने के लिए कार्य व्यापार और उसके रंग संकेत बड़े ही खूबसूरत हैं जैसे अंबिका का मुट्ठी में धान को मसलना, सूप से निरन्तर धान को फटकना, मल्लिका का अंगूठे से धरती कुरेदना, अंबिका की गोद में लेट जाना, खरल में औषध पीसते हुए ऊपर मुंह कर वेदना को आंखों में ही पी जाना, कालिदास के उज्जैन जाने पर बिना आवाज किए रोना, ओंठ काटना आदि उनकी मनोस्थिति के समर्थ वाहक बने हैं। इसी प्रकार से मल्लिका के प्रकोष्ठ में कालिदास और विलोम का इधर से उधर टहलना, कभी अग्निकाण्ठ को देखते रहना, कभी झरोखे के पास जाना आदि कार्य व्यापार द्वारा पात्रों के भावों का अनुकूल संप्रेषण हुआ है। बादलों की घुमड़न जैसे पात्रों के मन की घुमड़न बन गई है। जैसे अनुकूल ऋतु न मिलने पर बादल केवल घुमड़–घुमड़ कर ही रह जाते हैं, बरस नहीं पाते। ठीक उसी प्रकार मल्लिका और कालिदास के मन की भावनाएं हैं।

इस नाटक की मंच सज्जा में भी पर्याप्त प्रतीकात्मकता झलकती है। कुंभ, स्वस्तिक, कमल, शंख आदि से जैसे वैदिक संस्कृति की झांकी मिलती है। मंच पर उपस्थित प्रत्येक वस्तु नाटक की भाववस्तु से गहराई से जुड़ी हुई है। कोरे पृष्ठों का ग्रंथ जिस पर मल्लिका के आंसू, नाखूनों की खुरचन आदि के निशान जैसे उसे कोरा ही नहीं रहने देते। साक्षात् वह उसकी पीड़ा और वेदना का करुण महाकाव्य बन जाता है जो उसके मौन उत्सर्ग की पीड़ा को समेटे हुए है। सारा का सारा नाटक, उसका समूचा परिवेश, उसके पात्र, उनके कार्य–व्यापार जैसे निरन्तर गतिमान हो उठते हैं।

नाटक के संवादों में भी कहीं–कहीं प्रतीकात्मकता बड़ी सहज बन पड़ी है। अंबिका चाहती है कि मल्लिका के नीले वस्त्र सूख जायें अर्थात् मल्लिका के मन से कालिदास की भावना सूख जाये। लेकिन मल्लिका के वस्त्र ही नहीं उसका तन–मन ही कालिदास के रंग में इस प्रकार भीगा हुआ है कि जीवन का सारा रस सूख जाने पर भी मल्लिका के मन से कालिदास रूपी रस नहीं सूख पाता है। वह बार–बार कालिदास के 'अथ' सुखद से जीवन शुरू करने को कहती ही रह जाती है।

घोड़ों की टापें भी अपना विशेष ध्वनि प्रभाव उत्पन्न करती है। अनायास ही टापें सुनकर प्रेक्षक या पाठक के मन में एक भय या आशंका सी उत्पन्न हो जाती है। इसी प्रकार कालिदास के चले जाने पर मल्लिका अकेली रह जाती है और निरन्तर धीमा होता प्रकाश जैसे उसके जीवन में घिर आए गहन निराशा के अंधकार के रूप में अभिव्यक्ति देने लगता है।

इस प्रकार विभिन्न रंगमंचीय उपकरणों और मंच पर उपस्थित कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है जो नाटक को गति देने में सहायक न हो। यहां तक कि मृगशावक, वस्त्र, पात्र, कुंभ, आसन, छाज, कोरे पृष्ठों का ग्रंथ, पालना, शंख व स्वस्तिक के चिन्ह् इत्यादि सभी पात्रों की स्थितियों और भावनाओं की गहरी अभिव्यक्ति देने में सक्षम हुए हैं।

4.4 निष्कर्ष

इस प्रकार यथार्थवादी शैली का यह अपनी तरह का पहला नाटक है। डॉ. सुरेश अवस्थी का कथन है कि 'प्रसाद के 'स्कंदगुप्त' के बाद 'आषाढ़ का एक दिन' पहला नाटक है जिसमें गम्भीर साहित्यिक गुणों के साथ–साथ तीव्र और सशक्त नाटकीय क्षमता भी है। इसने हिन्दी रंगमंच को नया कलात्मक स्वर प्रदान किया है।' नाटकोचित भाषा इसकी उपलब्धि है। कई संस्थाओं द्वारा खेला जा चुका है। इस दृष्टि से इसकी अभिनेयता में कोई शंका नहीं है। नेमिचन्द्र जैन के अनुसार इस नाटक की संघटना को देखते हुए लगता है कि हिन्दी नाटक एकदम से व्यस्क हो गया है। वास्तव में भाषा, कथ्य, शिल्प सभी धरातल पर मोहन राकेश की कलात्मक रंगचेतना इस नाटक में उभरकर सामने आई है। हिन्दी रंगपरम्परा में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

4.5 कठिन शब्द –

यथार्थ, कलात्मक, उपकरण, संप्रेषण, प्रतीक, संरचना, संघर्ष, आक्रामक, अर्न्तद्वन्द्व, निर्रथक, परिवेश, प्रतिद्वंद्वी, प्रेक्षक, अर्न्तमन, निक्षेप, संवेदना।

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न –

प्रश्न 1 ' आषाढ का एक दिन' नाटक का समीक्षात्मक अध्ययन कीजिए।

प्रश्न 2 'आषाढ का एक दिन' शीर्षक की सार्थकता सिद्ध करें।

प्रश्न 3 'आषाढ का एक दिन' नाटक के महत्व पर प्रकाश डालिए।

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. 'आषाढ़ का एक दिन' – मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटकः उद्भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा
3. हिन्दी नाटक और रंगमंचः पहचान और परख – सं. डॉ. इन्द्रनाथ मदान
4. मोहन राकेश की रंग सृष्टि– जगदीश शर्मा
5. मोहन राकेश का नाट्य साहित्यः प्ररेणा एवं स्रोत – डॉ. राजेश्वर प्रसाद सिंह
6. हिन्दी का गद्य साहित्य – रामचन्द्र तिवारी
7. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास – बच्चन सिंह

*****

B.A. HINDI **Lesson No. 05**

COURSE CODE: HI-601 **B.A. Sem-6th**

'आषाढ़ का एक दिन' के पात्रों का चरित्र–चित्रण

5.0 रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 'आषाढ़ का एक दिन' के पात्रों का चरित्र–चित्रण

5.3.1 कालिदास

5.3.2 मल्लिका

5.3.3 अम्बिका

5.3.4 विलोम

5.3.5 प्रियंगुमंजरी

5.3.6 मातुल

5.3 निष्कर्ष

5.4 कठिन शब्द

5.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.1 उद्देश्य

– प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरांन्त आप सक्षम होंगें–

– 'आषाढ़ का एक दिन' के महत्वपूर्ण पात्रों से परिचित हो सकने में।

– 'आषाढ़ का एक दिन' के कुछ महत्वपूर्ण अंशों की व्याख्या करने में।

– 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के पात्रों के भाव को समझने में।

5.2 प्रस्तावना –

किसी भी नाटक के पात्रों का अध्ययन–विश्लेषण विभिन्न आधारों पर किया जा सकता है – मुख्य पात्र एवं गौण पात्र। मुख्य पात्र वह होते हैं जो नाटक के नायक या नायिका होते हैं। सम्पूर्ण कथानक का केन्द्र बिन्दु ये ही पात्र होते हैं और शास्त्रीय शब्दावली में कहें तो फल प्राप्ति का सीधा सम्बन्ध इन्हीं पात्रों से होता है। जबकि गौण पात्रों की स्थिति कथानक में मुख्य पात्रों की अपेक्षा कम समय के लिए होती हैं। ये मुख्य कथा के निर्वाह में सहायता प्रदान करते है। इस आलेख में 'आषाढ़ का एक दिन' के महत्वपूर्ण पात्रों का परिचय दिया जा रहा है।

5.3 'आषाढ़ का एक दिन' के पात्रों का चरित्र –चित्रण

'आषाढ़ का एक दिन'– कलाकार की सृजनात्मक प्रतिभा की समस्या को लेकर लिखा गया नाटक है। मोहन राकेश का यह नाटक स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाट्य साहित्य की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जाती है। इसकी प्रत्यक्ष कथावस्तु तो कालिदास के अन्तरंग जीवन से सम्बन्धित है, परन्तु मूलतः वह कवि के प्रसिद्ध होने के पहले की प्रेयसी मल्लिका का नाटक है। इसमें एक ऐसी समर्पित नारी की नियति का चित्र, जो कवि से अटूट प्रेम ही नहीं करती बल्कि किसी भी मूल्य पर उसे महान होते भी देखना चाहती है। महान वह बनता अवश्य है, पर इसका मूल्य मल्लिका को अपना सर्वस्व देकर चुकाना पड़ता है। ऐतिहासिक कालिदास के साथ ही समकालीन मनुष्य के और भी अनेक आयाम इसमें हैं, जो नाटक को एकाधिक स्तरों पर सार्थक और रोचक बनाते हैं। उसका नाटकीय संघर्ष, कला और प्रेम, सृजनशील व्यक्ति और परिवेश, भावना और कर्म, कलाकार और राज्य आदि कई स्तरों को छूता है। इसी प्रकार काल के आयाम को बड़ी रोचक तीव्रता के साथ नाटक में प्रस्तुत किया गया है– 'लगभग एक पात्र के रूप में। मल्लिका और उसके परिवेश और उसकी परिणति में तो वह मौजूद है ही स्वयं कालिदास भी उसके विघटनकारी रूप का अनुभव करता है। अपनी समस्त आत्म केन्द्रिता के बावजूद उसे लगता है कि अपने परिवेश से टूटकर वह स्वयं भी भीतर कही टूट गया है।'

इस नाटक का उद्देश्य किसी ऐतिहासिक अर्थवत्ता की प्रतिष्ठा करना या उसके कथा प्रवाह में गतिमान चरित्रों की प्रसंगोपात प्रकट करना नहीं प्रत्युत उन चरित्रों को आधुनिक संवेदनाओं के मध्य उतार कर परिवेश की प्रतिबद्धता में पनपे उनके मानसिक द्वन्द्व का प्रकाशन करना था जिसमें एक अनवरत द्वन्द्व व्यक्ति का व्यक्ति से, परिस्थिति का जीवन से, आस्था का अस्थिरता से, आदर्श का यथार्थ से चलता है। मानव इन स्थितियों में अपनी नियति स्वयं बन जाता है। नाटककार का अभीष्ट कालिदास नामक पात्र का वैयक्तिक चित्रण करना नहीं अपितु उसके माध्यम से सृजनात्मक

प्रतिभाओं का निर्वैयक्तिक चित्रण करना रहा है। नाटककार के लिए इतिहास एक माध्यम है– वर्तमान यथार्थ की प्रस्तुति का। उन्हीं के शब्दों में– 'इतिहास या ऐतिहासिक व्यक्तित्व का आश्रय साहित्य को इतिहास नहीं बना देता, तथ्यों का संकलन करता है, उन्हें एक समग्र क्रम में प्रस्तुत करता है। साहित्य का ऐसा उद्देश्य कभी नहीं रहा। साहित्य इतिहास के समय से बंधता नहीं, समय में इतिहास का विस्तार करता है, युग से युग को अलग नहीं करता, कई–कई युगों को एक साथ जोड़ देता है। इस तरह इतिहास में आज और कल उसके लिए आज और कल ही रह जाते हैं। समय की असीमता में कुछ ऐसे क्षण बन जाते है जो जीवन को दिशा संकेत देने की दृष्टि से अविभाज्य है। इस तरह साहित्य में इतिहास अपनी यथातथ्य घटनाओं में व्यक्त नहीं होता घटनाओं को जोड़ने वाली ऐसी घटनाओं में व्यक्त होता है जो अपने ही एक नये और अलग रूप में इतिहास का निर्माण करती है।'

इस नाटक की कथावस्तु में निहित इतिहास भी इसी तरह का है। कालिदास और मातृ गुप्त का नामोल्लेख, गुप्त वंश से कालिदास का वैवाहिक सम्बन्ध तथा उसके काव्य ग्रंथों के उल्लेख को छोड़कर शेष सभी वस्तु प्रसंग तथा उससे जुड़े चरित्र काल्पनिक हैं।

कथावस्तु –

नाटककार ने अपने उद्देश्य के अनुरूप यहाँ कथावस्तु की सृष्टि की है कालिदास और मल्लिका की प्रणय कथा नाटक का केन्द्रीय कथासूत्र है। नाटक की कथा आषाढ़ के प्रथम दिन से प्रारम्भ होती है। वर्षा में भीगी मल्लिका घर आकर अपनी माँ अम्बिका से नील कमल की तरह कोमल और आर्द्र, वायु की तरह हल्का और स्वप्न की तरह चित्रमय प्रेम की भावना का अनुभूतिमय विश्लेषण प्रस्तुत करती है। सौन्दर्य के इस साक्षात्कार में उसने भावना में भावना का वरण (चयन) किया और यह भावाधार था– कालिदास।

मल्लिका अपनी माँ द्वारा लगाई वर्जनाओं का अनादर कर भावना के उच्चादर्श की प्रतिष्ठा करती है।– कालिदास का वरण वह भाव जगत के कोमल धरातल पर करती है। कालिदास की प्रसिद्धि सुनकर उज्जयिनी नरेश बहुत प्रभावित होते है और राज पुरुषों को भेजकर उन्हें राजधानी बुलवाते है। कालिदास के मन में इच्छा–अनिच्छा एवं अभाव तथा महत्वाकांक्षा का द्वन्द्व चलता है जिसमें महत्वाकांक्षा विजयी होती है। अम्बिका तथा विलोम चाहते है कि कालिदास मल्लिका से विवाह करके उज्जयिनी के लिए प्रस्थान करें लेकिन मल्लिका किसी भी ऐसे प्रस्ताव का विरोध करती है जो कालिदास के उज्जयिनी गमन के मार्ग में बाधक हो। वह कालिदास को यह कहकर भेज देती है– 'क्यों नहीं सोचते कि नई भूमि तुम्हे यहाँ से अधिक सम्पन्न और उर्वरा मिलेगी। इस भूमि से तुम जो कुछ ग्रहण कर सकते थे, कर चुके हो। तुम्हें आज नयी भूमि की आवश्यकता है, जो तुम्हारे व्यक्तित्व को पूर्ण बनावे।

कालिदास उज्जयिनी जाकर राजकवि का सम्मानपूर्ण पद प्राप्त करते हैं। प्रियंगुमंजरी से उनका विवाह हो जाता है। इसके पश्चात् मातृ गुप्त बनकर कश्मीर का शासक पद संभालने के लिए मल्लिका के ग्राम प्रान्तर से होकर गुजरते है और उससे मिले बिना ही कश्मीर चले जाते हैं। इधर मल्लिका राजकवि कालिदास की रचनाएँ वहाँ से आने

वाले व्यापारियों से मँगवाती रहती है। उसने लोगों से कालिदास के विवाह की चर्चा भी सुनी है, परन्तु अपनी साधारण स्थिति व्यक्त कर प्रत्यक्ष रूप से उस विवाह का समर्थन करती है। दो साल के भीषण ज्वर से अम्बिका का देहावसान हो जाता है। इस अभाव में मल्लिका विलोम की वासना का शिकार बनती है और एक सन्तान की माँ बन जाती है।

इस टूटने में भी मल्लिका कालिदास के लिए एक कोरे पृष्ठों की पुस्तक भेंट हेतु संजोने में जुटी है। कश्मीर उपद्रव में घायल कालिदास बीमारी की अवस्था में मल्लिका की कुटी में प्रवेश करता है – इस आशा से कि वह शेष जीवन को अथ से, मंगल से पुनः प्रारम्भ करेगा किन्तु मल्लिका के वर्तमान को देखकर उसे व्यर्थता का बोध होता है। इस व्यर्थता के बोध को वह समय की शक्ति का दान मानकर मल्लिका को मेघों की गर्जना एवं बिजली की चमक के बीच असहाय छोड़कर चला जाता है।

घटनाओं का संयोजन नाटककार ने बड़े ही कौशलपूर्ण ढंग से किया है। कालिदास तथा मल्लिका का प्रेम सम्बन्ध, कालिदास की प्रतिभा से प्रभावित हो उज्जयिनी नरेश द्वारा बुलावा भेजना, मल्लिका द्वारा कालिदास को जाने के लिए प्रेरित करना, कालिदास का उज्जयिनी गमन, प्रियंगुमंजरी से परिणय, मल्लिका के ग्राम–प्रान्तर में कालिदास का आना, कश्मीर का उपद्रव, घायल कालिदास का प्रत्यावर्तन, मल्लिका के जीवन से कालिदास की वितृष्णा आदि घटनाओं को अन्य छोटी–छोटी घटनाओं के सहारे विकसित करते हुए नाटककार अपने अभीष्ट बिन्दु तक पहुँचा है। आषाढ़ के प्रथम दिन से नाटक का प्रारम्भ होता है और वर्षों बाद इसी दिन नाटकीय कथा की परिसमाप्ति भी होती है।

चरित्र चित्रण–

नाटक में कुल बारह पात्र है, परन्तु उनमें से प्रमुख पाँच है – कालिदास, मल्लिका, अम्बिका, विलोम, और प्रियंगुमंजरी शेष सब गौण पात्र है।

5.3.1 कालिदास–

'आषाढ़ का एक दिन' का कालिदास इतिहास प्रसिद्ध कालिदास होते हुए भी स्वार्थी, आत्म केन्द्रित और क्षुद्र कालिदास है। उसके विषय में अम्बिका का यह कथन पूर्णतः सत्य है– 'वह व्यक्ति आत्म सीमित है। संसार में अपने अतिरिक्त उसे और किसी से मोह नहीं है' तथा... तुम्हारे (मल्लिका के) साथ उसका इतना ही सम्बन्ध है कि तुम एक उपादान हो जिसके आश्रय से वह अपने से प्रेम कर सकता है, अपने पर गर्व कर सकता है।'

यही कालिदास का यथार्थ चरित्र है जो नाटक आरम्भ से लेकर अन्त तक उभरता है। इसीलिए नाटककार का यह दावा कि आषाढ़ का एक दिन का कालिदास दुर्बल नहीं है, कोमल, अस्थिर और अन्तर्द्वन्द्व से पीड़ित है, बहुतों को निस्सार जान पड़ता है।

वस्तुतः कालिदास के चरित्र का चित्रण करने में नाटककार इस दृष्टिकोण को लेकर चला है– 'कालिदास मेरे लिए एक व्यक्ति नहीं, हमारी सृजनात्मक शक्तियों का प्रतीक है। नाटक में वह प्रतीक उस अन्तर्द्वन्द्व को संकेतित करने

के लिए है जो किसी भी काल में सृजनशील प्रतिभा को आन्दोलित करता है। व्यक्ति कालिदास को उस अन्तर्द्वन्द्व से गुजरना पड़ा या नहीं, यह बात गौण है। बात यह है कि हर काल में बहुतों को उसमें से गुजरना पड़ा है, हम भी आज उसमें से गुजर रहे है। हो सकता है व्यक्ति कालिदास का यह नाम भी वास्तविक न हो, पर हमारी आज तक की सृजनात्मक प्रतिभा के लिए इससे अच्छा दूसरा नाम, दूसरा संकेत, मुझे नहीं मिला।' नाटककार ने कश्मीर के शासक मातृगुप्त और प्रसिद्ध कवि नाटककार कालिदास को एक ही माना है।

नाटक में कालिदास का चरित्र एक अस्थिर और विरोधाभास से युक्त चरित्र है। एक ओर तो वह कहता है– 'मैं राजकीय मुद्राओं से क्रीत होने के लिए नहीं हूँ, तो दूसरी ओर उज्जयिनी जाने पर राजकवि का सम्मानपूर्ण पद प्राप्त करने पर अपने आत्मसम्मान व स्वाभिमान को भुलाकर कश्मीर में शासक का पद स्वीकार कर लेता है। सत्ता और प्रभुता के मोह में राजसत्ता के साथ जुड़ता चला जाता है। ग्राम प्रान्तर में रहने वाले कालिदास का एक रूप वह है, जो उदात्त और प्रशंसनीय है। यहाँ वह एक ऐसे रचनाकार के रूप में हमारे सामने आता है जो यह मानता है ... कि यह ग्राम प्रान्तर मेरी वास्तविक भूमि है। मैं कई सूत्रों से इस भूमि से जुड़ा हूँ। उन सूत्रों में तुम हो (मल्लिका) यह आकाश और मेघ है, यहाँ की हरियाली है, हरिणों के बच्चे हैं, पशुपाल है।' प्रथम अंक में हरिण शावक को लेकर राजपुरुष दन्तुल से जब उसका संघर्ष होता है, तब वह निर्भयता से कहता है– 'इस प्रदेश में हरिणों का आखेट नहीं होता राजपुरुष तुम अभिलाषा से आये हो, इसलिए इतना ही पर्याप्त है कि हम इसके लिए तुम्हें अपराधी न माने।... यह हरिण शावक इसी पार्वत्य भूमि की सम्पत्ति है।... तुम यह सोचकर भूल रहे हो कि हम इसे तुम्हारे हाथ में सौंप देंगे।'

कालिदास का मूल व्यक्तित्व कवि का है और इस व्यक्तित्व का अवलम्ब मल्लिका है लेकिन जब वह प्रियंगुमंजरी से विवाह कर लेता है तो उसके व्यक्तित्व निर्माण की बागडोर उसके हाथ में चली जाती है। वह कवि कालिदास को शासक मातृगुप्त में परिवर्तित कर देती है यद्यपि ऐसा करने में उसे बहुत परिश्रम करना पड़ता है। कालिदास के व्यक्तित्व का यही एक दुर्बल पक्ष है कि वह प्रभुता और सुविधा के मोह में उसके अनुरूप अपने को ढालता जाता है। उसकी त्रासदी यह नहीं कि उसने अपना मूल व्यक्तित्व गंवाया है, बल्कि उसकी त्रासदी यह है कि वह कालिदास और मातृगुप्त वाले दोनों व्यक्तित्व को बचाये रखने का प्रयास करता रहा है। यहाँ कालिदास की त्रासदी आधुनिक व्यक्ति तथा कलाकार की त्रासदी है। डॉ. गोविन्द चातक का यह कथन पूर्णतः सत्य है – 'सिद्धान्ततः बड़े–बड़े पदों और सरकारी कमेटियों में पद्मश्री और पुरस्कार प्राप्ति आदि कई प्रकार के प्रलोभनों में आज का लेखक आता रहा है। अभावग्रस्त मध्यवर्गीय भावना के प्रतिनिधि होने के कारण वह उन पर बुरी तरह झपटा है ... इसलिए कहा जा सकता है कि कालिदास के माध्यम से राकेश ने समसामयिक साहित्यकार की मानसिकता का चित्रण किया है।'

कालिदास में आसक्ति का विकास है। कालिदास राजसुख भोगने में अपने जीवन की पूर्णता मानता है। वस्तुतः कालिदास का चरित्र आधुनिक मानव और विशेषकर साहित्यकार का चरित्र है, जो नाटककार के दृष्टिकोण के अनुरूप

निर्मित हुआ है। उसके चरित्र– चित्रण में स्वयं नाटककार के व्यक्तित्व, द्वन्द्व, शंकाओं और प्रश्नों की अभिव्यक्ति हुई है। उस पर मोहन राकेश के निजी व्यक्तित्व की बड़ी गहरी छाप दिखती है।

5.3.2 मल्लिका –

इस नाटक का दूसरा प्रमुख पात्र है–मल्लिका। वस्तुतः नाटक में कालिदास नहीं, मल्लिका ही वह केन्द्र है जिसके चारों ओर नाटक के पात्र घूमते हैं। कालिदास के शैशवकाल की चिरसंगिनी मल्लिका भावना लोक में विचरण करने वाली आदर्श प्रेमिका है। कालिदास से उसका अगाध प्रेम है और कैसी भी परिस्थिति हो, वह उसके लिए कोई बात सुनना नहीं चाहती। वह अनेक लोकापवादों, माता की वर्जनाओं तथा अभावों के बावजूद कालिदास से प्रेम करती है। उसका यह प्रेम निःस्वार्थ प्रेम है, मंगलमय प्रेम है। वह चाहती है कि कालिदास की प्रतिभा शिखर पर पहुँचे, इसीलिए उसे उज्जयिनी जाकर राजकवि का पद स्वीकार करने के लिए राजी करती है। उसे मालूम है कि अभावग्रस्तता में उसकी प्रतिभा का सही सम्मान नहीं हो सकता। राजाश्रय के प्रति उसका दृष्टिकोण आदर्शवादी है। वस्तुतः कालिदास को कालिदास बनाने में उसी का प्रमुख हाथ है। उसका व्यक्तित्व सर्वाधिक आकर्षक है और वही दर्शक पाठक की समूची सहानुभूति का एकमात्र आलम्बन बनती है। उसका प्रेम इतना महान है कि वह उसके लिए व्यक्तिगत हानि–लाभ व स्वार्थ का बलिदान कर कालिदास को उज्जयिनी जाने पर विवश कर देती है। विपरीत परिस्थितियों का कोई भी दबाव उसे कालिदास से अलग नहीं कर पाता है। कालिदास के प्रियंगुमंजरी के साथ गाँव आने पर उसका कालिदास के स्थान पर प्रियंगुमंजरी से मिलना तो नियति का ऐसा कोमल–करुण व्यंग्य है जो दर्शक के हृदय को बेध देता है। प्रियंगुमंजरी मल्लिका के जीवन के व्यंग्य को अत्यन्त पैनेपन से व्यक्त करती है। उसका प्रत्येक सहयोग प्रस्ताव मल्लिका की जीवन विडम्बना को गहराता चलता है जिसमें पात्र अनुस्वार और अनुनासिक और मूर्ख अधिकारियों से विवाह का प्रस्ताव तो सर्वाधिक कटु है। मल्लिका का प्रियंगुमंजरी के साथ कश्मीर जाने से इन्कार करना और अपने टूटे–फूटे घर के परिसंस्कार की अस्वीकृति उसके चरित्र को स्वाभिमान और गरिमा के उदात्त रंगों से भर देती है।

भीषण निर्धनता की दशा में भी उसका कालिदास की रचनाओं को खरीदकर पढ़ना, कालिदास के महाकाव्य के लिए अपने हाथों से पृष्ठों को बनाकर रखना और इस भेंट के लिए अन्त तक उसकी प्रतीक्षा करते रहना मानो अपने आप में एक करुण महाकाव्य है। परिस्थितियाँ उसे वारांगना बनने पर विवश करती है परन्तु वह कहीं भी अपने उज्ज्वल प्रेम की उच्चतर भावभूमि से नीचे नहीं उतरती। भौतिक अभावों से बचने के लिए विवश होकर अनचाहे विलोम से विवाह कर लेने तथा उसकी बच्ची की माँ बन जाने के बाद भी वह कालिदास को भूल न सकी– 'मैं यद्यपि तुम्हारे जीवन में नहीं रही परन्तु तुम मेरे जीवन में सदा बने रहे हो। मैंने कभी तुम्हें अपने से दूर नहीं होने दिया... जो भाव तुम थे वह दूसरा नहीं हो सका, परन्तु अभाव के कोष्ठ में किसी दूसरे की जाने कितनी–कितनी आकृतियाँ हैं।'

कालिदास भी जैसे जीवन के किसी क्षण में उससे अलग नहीं हो पाता। स्वयं कालिदास का यह कथन प्रमाण है– 'कुमारसम्भव' की पृष्ठभूमि यह हिमालय है और तपस्विनी उमा तुम हो। मेघदूत के यक्ष की पीड़ा मेरी पीड़ा है और

विरह विमर्दित यक्षिणी तुम हो। यद्यपि मैंने स्वयं यहाँ होने और तुम्हें उज्जयिनी में देखने की कल्पना की है। 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' में शकुन्तला के रूप में तुम्हीं मेरे सामने थीं...।'

नाटक के प्रारम्भ में उसका यह कथन– 'फिर भी मुझे अपराध का अनुभव नहीं होता। मैने भावना में एक भावना का वरण किया है। मेरे लिए वह सम्बन्ध और सब सम्बन्धों में बड़ा है। मैं वास्तव में अपनी भावना से ही प्रेम करती हूँ जो पवित्र है, कोमल है, अनश्वर है।' नाटक के अन्त में भी उतना ही सत्य है। वस्तुतः नाटककार का उद्देश्य ऐसी नारी चरित्र का प्रकाशन रहा है जो पुरुष की प्रणयिनी से अधिक पुजारिन है। एक माँ बनी प्रेमिका मल्लिका का पुराने प्रेमी कवि कालिदास के प्रति प्रेम भावना का औचित्य इसी पुजारिन रूप में ही देखा जा सकता है। यहीं पर उसका चरित्र प्रेयसी और प्रेरणा का ही न बनकर भूमि में आरोपित उस आस्था का भी हो जाता है, जो ऊपर से झुलस कर भी अपने मूल में विरोपित नहीं होगा । वह वास्तव में स्वतंत्रता पूर्व की भारतीय नारी है जो केवल श्रद्धा है। पुरुष की स्वच्छन्दता का विरोध करने की शक्ति उसमें नहीं है।' नाटककार का यह कथन ठीक ही हैं कि 'मल्लिका का चरित्र एक प्रेयसी और प्रेरणा का ही नहीं, भूमि में रोपित उस स्थिर आस्था का भी है जो ऊपर से झुलस कर भी अपने मूल में विरोपित नहीं होती।' और नाटककार के मन में मल्लिका का यही रूप कल्पित था। 'मेरे लिए मल्लिका की बाहरी टूटन उस चरित्र की परिकल्पना का अनिवार्य अंग रही है क्योंकि उसी से उसकी आन्तरिक अखण्डता रेखांकित होती है।'

नाटक में चित्रित मल्लिका के दाम्पत्य जीवन की विडम्बना यह है की तन के साथ विलोम जुड़ा है, लेकिन मन का द्वार उसके लिए सदा बन्द है। जो उसके मन में है, वह भी उसको स्वीकार नहीं करता, क्योंकि संवेदनशील होने का दम्भ भरने वाला कालिदास भी उसके तन को ही देख पाता है, मन को नहीं। वह भी यह नहीं सह पाता कि जिसके मन में वह है, उसके तन पर किसी और का अधिकार हो।

5.3.3 अम्बिका–

अम्बिका, मल्लिका की माँ है। वह कालिदास को सन्देह और वितृष्णा की दृष्टि से देखती है, वह घृणा करती है। उसे यह सहन नहीं होता है कि कालिदास मल्लिका से विवाह न करके मात्र प्रेम करे। मल्लिका की भावनाओं को वह केवल छलना और आत्म प्रवंचना समझती है तथा जीवन की आवश्यकताओं को ही सर्वोच्च प्राथमिकता देती है। उसका जीवन भावना नहीं, कर्म है। वह चाहती है कि मल्लिका यथार्थ जीवन की कठोरता को समझे और अपेक्षाकृत व्यावहारिक व्यक्ति विलोम से विवाह कर ले। उसका चरित्र नितान्त यथार्थवादी है। अपने विषय में उसका यह कथन सर्वथा उचित ही है – 'मेरी वह अवस्था बीत चुकी है, जब यथार्थ से आँखे मूँद कर जिया जाता है।'

अम्बिका ने समय की प्रत्येक भंगिमा देखी है। उसका जीवन भावना का नहीं कर्म का है।' उसकी प्रत्येक वाणी में यथार्थ का सन्निवेश है, जीवन के अनुभवों की छाप है। उसने कालिदास के बारे में जो भविष्यवाणी की थी वह अक्षरशः सत्य निकली 'मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ. मातुल कि वह (कालिदास) उज्जयिनी अवश्य जायेगा।' क्योंकि 'वह व्यक्ति आत्म सीमित है। संसार में अपने सिवा उसे और किसी से मोह नहीं है।' प्रियंगुमंजरी द्वारा गृह परिष्कार की बात करने

में छिपे व्यंग्य एवं उपहास को वह भाँप लेती है। उसे अपनी बेटी पर क्रोध आता है जिसकी भावना का मूल्य इस तरह चुकाया जा रहा है। उसे मर्मान्तक पीड़ा होती है– 'आज वह तुम्हें तुम्हारी भावना का मूल्य देना चाहता है, तो क्यों नहीं स्वीकार करती। घर की भित्तियों का परिसंस्कार हो जायेगा और तुम उनके यहाँ परिचारिका बनकर रह सकोगी। इससे बड़ा और क्या सौभाग्य तुम्हें चाहिए।'

5.3.4 विलोम–

विलोम नाटक का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पात्र है। विलोम एक असफल कालिदास है और कालिदास एक सफल विलोम। सम्भवत् कारण है कि कहीं दोनों एक दूसरे के बहुत निकट भी पड़ते हैं। विलोम की आँखों में कालिदास को अपने हृदय का सत्य झलकता दिखाई देता है उसे उलझन होती है। 'कालिदास मल्लिका का याचित भाव है और विलोम अयाचित। "विलोम क्या है– एक असफल कालिदास।' विलोम शायद मल्लिका को इतना नहीं चाहता, जितना यह चाहता है कि वह कालिदास से प्रेम न करे। इस पात्र के माध्यम से नाटककार ने ग्रामीण जनता की मनोवृत्ति को भी अभिव्यक्त किया है। वह जो अनुभव करता है, स्पष्ट रूप से कह देता है। अम्बिका के मन की अनेक दबी घुटी भावनाओं एवं इच्छाओं को वह मुखर होकर कह देता है। कालिदास की अव्यवहारिकता एवं मल्लिका के दारिद्रय के कारण वह अन्त में मल्लिका से शरीर सम्बन्ध स्थापित करने में सफल अवश्य हो जाता है, पर उस समय तक मल्लिका वीरांगना बन चुकी होती है। 'विलोम नाटक के कालिदास की अपेक्षा सबल और सफल प्रतीत होता है, क्योंकि वह दुराग्रह की आक्रामक शक्तियों को संकेतित करता है। वह अपने आन्तरिक द्वन्द्व को खो चुका है, इसीलिए अपेक्षतया अधिक संयोजित है। प्रत्यक्षतः आशा और आस्था की शक्तियाँ हताशा और अनास्था से कोमल और निर्बल प्रतीत हो सकती है परन्तु सत्य यह है कि पाशविक बर्वर शक्तियों के हाथों वे पराजित नहीं होती। यही कारण है कि 'आषाढ़ का एक दिन' में पराजित व्यक्ति टूटा हुआ कालिदास नहीं, अपने में संयोजित विलोम है क्योंकि विजय और पराजय के संकेत वे दोनों स्वयं नहीं है, संकेत है मल्लिका जो कालिदास की आस्था का विस्तारित रूप है।'

विलोम नाटक में तीन स्थलों पर उपस्थित होता है। प्रथम अंक में कालिदास के अन्तः करण का दर्पण बनकर तथा मल्लिका के लिए दुराग्रह बनकर। द्वितीय अंक में उसकी आस्था पर व्यंग्य व उपहास करने तथा तृतीय अंक में कालिदास की विलक्षण इच्छा का उपहास करने। इस उपहास में ऐसा प्रतीत होता है जैसे विलोम के वेष में कालिदास अपनी ही भावना का उपहास कर रहा है।

5.3.5 प्रियंगुमंजरी –

प्रियंगुमंजरी सत्ता एवं प्रभुता का प्रतीक है जिसका वरण कालिदास की महत्वाकांक्षा ने आत्मसीमित होकर किया है। इस मोह में पड़कर कालिदास उस विशाल से कट गया जिसने उसकी प्रतिभा का निर्माण किया था। वह कालिदास को उसके विगत जीवन से विरत करने का भरपूर प्रयास करती है। उसका अधिक समय इसी आयास में बीतता है कि उनका बढ़ा हुआ चरण पीछे न हट जाय।

वह मल्लिका के प्रेम का मूल्य चुकाकर जैसे कालिदास पर से उसका अधिकार समाप्त करना चाहती है, अनुस्वार व अनुनासिक से मल्लिका के विवाह की बात चलाकर उसकी सीमा उसके स्तर का बोध करा देना चाहती है किन्तु उसके ये सारे प्रयास उसके चरित्र के किसी उज्ज्वल पक्ष को सामने नहीं लाते। नारी होकर भी मल्लिका के अन्तस् की वेदना को समझने की संवेदनशीलता उसमें नहीं है। वह वस्तुतः सत्ता और प्रभुता का प्रतीक है और उस प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करती है जहाँ हर समस्या का समाधान अर्थ में देखा जाता है।

नाटक में प्रियंगुमंजरी के प्रयासों से इतना अवश्य हुआ है कि उसके द्वारा निर्मित परिवेश में अभाव की पूर्णता प्राप्त कर लेने वाले कालिदास पर इतना प्रभाव छाया रहा कि वह चाहकर भी मल्लिका से अलग रहा और जब सत्ता एवं प्रभुता का मोह टूटा तब भी वह मल्लिका को न अपना सका।

5.3.6 मातुल –

मातुल राजकीय जीवन के लोभ का शिकार है। उसमें आत्मश्लाघा का भाव अधिक है। उसे अपने मुँह के शब्द सुनने में ऐसा रस प्राप्त होता है कि वह बोलता ही जाता है। परिस्थिति को समझना नहीं चाहता। वह ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करने में भी निपुण है जिससे लोगों में खप सके, लोग उसे अपना सकें। स्वार्थ साधन के लिए आज जिस चाटुकारिता की अपेक्षा है, मातुल उसके उपयुक्त है। राजकीय लोभ के कुफल को प्राप्त करने पर ही– उसे उस जीवन की औपचारिकता एवं कपटाचरण की सम्यक प्रतीति होती है। उसे कटु अनुभव होता है– इन चिकने शिला खण्डों में तो वह मिट्टी ही अच्छी थी, जो पैर को पकड़ती तो थी।'

अन्य पात्र –

निक्षेप, मातुल तथा अनुस्वार, अनुनासिक की नियोजना का एक उद्देश्य– नाटक में हास्य की सृष्टि करना भी है। निक्षेप मल्लिका का ही अन्तर्भाव व्यक्त करता है। उसकी वाणी में मल्लिका के ही भाव व्यक्त होते है। वह मल्लिका का अनचाहा भाव है। अम्बिका जब निक्षेप को बाहरी व्यक्ति समझ कर अपरिचित व्यवहार करती है तो निक्षेप उस समय अपनी अन्तरंगता का ही भाव व्यक्त करता है– ''नक्षेप बाहर का व्यक्ति नहीं है– अम्बिका। 'रंगिणी और 'संगिनी' नामक उज्जयिनी की दो शोध कर्त्रियों के माध्यम से नाटककार ने तथाकथित शोध कार्य व उसकी प्रक्रिया का तीखा मजाक उड़ाया है। उनका कालिदास के व्यक्तित्व से कोई सम्बन्ध नहीं है। अतः हम यह नहीं स्वीकार कर सकते कि 'उनकी अति साधारण बुद्धि का प्रदर्शन कालिदास के व्यक्तित्व को आघात तक पहुँचाता है।'

अनुस्वार और अनुनासिक अयोग्य अधिकारियों का प्रतिनिधित्व करते है। दन्तुल उन राज्याधिकारियों का प्रतीक है जिन्हें अपने अधिकारों की व्यापकता का दम्भ है जो प्रजा के अधिकारों के रक्षक नहीं, भक्षक अवश्य हैं। अग्निमित्र का नाम सिर्फ मल्लिका के विवाह के प्रसंग में आया है।

5.4 निष्कर्ष

समग्रतः 'आषाढ़ का एक दिन' के इन पात्रों और इनके चरित्रांकन के विषय में कहा जा सकता है कि 'कालिदास की नियति आधुनिक मानव की नियति है। विलोम समसामयिक जीवन की अनास्था का स्वर है तो मल्लिका आस्था का विस्तारित रूप। पात्र ऐतिहासिकता की छाया में काल्पनिक होते हुए भी हमारे वर्तमान के मूर्त रूप हैं। सभी अपने स्वाभाविक रूप में नाटक की कथ्य–चेतना को उभारते हैं। हमारे यथार्थ का उद्घाटन करते हैं ।

5.5 कठिन शब्द –

प्रत्यक्ष, अन्तरंग, प्रंसगोंपात, विवृति, अभीष्ट, वयैक्तिक, निर्वैयक्तिक, सृजनात्मक, व्यंजना, सामाजिक द्वन्द्व, आयास, आन्तरिक, संकेतित, सम्यक।

5.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की कथावस्तु बताइए।

प्रश्न 2 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में कालिदास एवं मल्लिका के सम्बन्ध को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 3 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के पात्रों का चरित्र–चित्रण एवं निम्नलिखित संवादों का सूक्ष्म विश्लेषण करें।

क) तभी मुझे अनुभव हुआ कि वह क्या है जो भावना को कविता का रूप देता है। मैं जीवन में पहली बार समझ पायी कि क्यों कोई पर्वत–शिखरों को सहलाती मेघ–मालाओं में खो जाता है, क्यों किसी को अपने तन–मन की अपेक्षा आकाश में बनते–मिटते चित्रों का इतना मोह होता रहता है।

ख) योग्यता एक चौथाई व्यक्तित्व का निर्माण करती है। शेष पूर्ति प्रतिष्ठा द्वारा होती है।

ग) मैं अनुभव करता हूँ कि यह ग्राम–प्रान्तर मेरी वास्तविक भूमि है। मैं कई सूत्रों से इस भूमि से जुड़ा हूँ। उन सूत्रों में तुम हो, यह आकाश और ये मेघ हैं, यहाँ की हरियाली है, हरिणों के बच्चे हैं, पशुपाल हैं। ...यहाँ से जाकर मैं अपनी भूमि से उखड़ जाऊँगा।

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ –

8. 'आषाढ़ का एक दिन' – मोहन राकेश
9. हिन्दी नाटकः उद्‌भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा
10. हिन्दी नाटक और रंगमंचः पहचान और परख – सं. डॉ. इन्द्रनाथ मदान
11. मोहन राकेश की रंग सृष्टि– जगदीश शर्मा
12. मोहन राकेश का नाट्‌य साहित्यः प्रेरणा एवं स्रोत – डॉ. राजेश्वर प्रसाद सिंह
13. हिन्दी का गद्य साहित्य – रामचन्द्र तिवारी

*****

'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की रंगमंचीयता

6.0 रूपरेखा

6.1 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की रंगमंचीयता

6.3.1 कथानक

6.3.2 चरित्र

6.3.3 संवाद

6.3.4 देशकाल

6.3.5 रचना–शैली

6.4 निष्कर्ष

6.5 कठिन शब्द

6.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.1 उद्देश्य

– प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोंपरांत विद्यार्थी सक्षम होंगें –

– 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक रंगमंचीय दृष्टि से एक सफल नाटक है– जानकारी प्राप्त कर सकने में।

– 'आषाढ का एक दिन' नाटक की रचना शैली से अवगत होने में।

– 'आषाढ का एक दिन' नाटक की संवाद योजना को जानने में।

6.2 प्रस्तावना –

नाटक और रंगमंच एक दूसरे पर आश्रित हैं। रंगमंच के बिना नाटक की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। यही कारण है कि प्राचीन काल से ही इसे दृश्य काव्य कहा गया है। आज साहित्यिक कृतियों के समान नाटक की प्रकृति भी साहित्यिक है किन्तु रंगमंच और प्रदर्शन की रूढ़ियाँ, रंग सज्जा, प्रकाश व्यवस्था तथा संगीत और नृत्य आदि कलाओं के तत्व इसकी प्रेषणीयता को विशिष्ट तथा भिन्न रूप प्रदान करते है। वस्तुतः कथ्य की अपेक्षा दृश्य काव्य मनुष्य पर अधिक प्रभाव डालता है और यही दृश्य सुविधा, नाटककार के विचारों को अन्य साहित्यिक विधाओं की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली रूप से प्रस्तुत करती हैं।

6.3 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की रंगमंचीयता

रंगमंच अंग्रेजी शब्द 'थियेटर' का पर्याय है जिसका सामान्य अर्थ होता है टकटकी लगाकर देखना और विचारना। नाटक की अभिव्यक्ति के लिए रंगमंच ही एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से नाटक जीवन्त होता है। रंगमंच मानव जीवन की आदिम प्रवृत्ति है। 'रंगमंच जीवन का दर्पण अथवा अनुकृति मात्र न होकर वह दृष्टि है जिसमें वह उसे एक सामग्री की भाँति उपयोग करता है। वह अनेक माध्यमों से इन्द्रिय संवेगों की जीवन्त कविता रचकर आध्यात्मिक आनन्द का संस्पर्श कराता है।'

वर्तमान युग में नये नाटकों को आज सौभाग्यवश प्रशिक्षित एवं प्रतिभावान निर्देशों का सहयोग भी प्राप्त है जो उसे मंच पर विभिन्न रूपों में मंचित कर उसकी प्रयोगशीलता के आयाम बढ़ाते हैं। वर्तमान युग में जो प्रयोग का स्तर है वह दुर्बल–से–दुर्बल नाटक में भी प्राण संचार कर सकता है। वर्तमान युग में एक ही नाटक को भिन्न–भिन्न मंचीय प्रयोग से प्रस्तुत करके उसमें छिपी विभिन्न सम्भावनाओं को उद्घाटित किया जाता है। नाटककार मोहन राकेश में एक कुशल नाट्य निर्देशक के गुण थे क्योंकि रंगमंच से सदा उनका निकट सम्पर्क रहा है। मोहन राकेश ने हिन्दी रंगमंच को विकास की एक नयी दिशा दी और यही कारण है कि उनके प्रत्येक नाटक रंगमचीय गुणों से परिपूर्ण है।

6.3.1 कथानक

नाटककार के रूप में मोहन राकेश ने नाट्य साहित्य में ख्याति अर्जित की है। मोहन राकेश के समय में भ्रान्ति थी कि रंगमंच का उचित विकास न होने के कारण हिन्दी नाट्य साहित्य में रंगमंचीय अथवा अभिनेय युक्त नाटक लिखे जाने की सम्भावना नहीं है। मोहन राकेश के सम्पूर्ण नाट्य साहित्य का अवलोकन करने के पश्चात्य पता चलता है कि उन्होंने समाज में फैली इस भ्रान्ति को तोड़ा है। 'आषाढ़ का एक दिन' इसी परम्परा का नाटक है। इन्होंने नाटकों को रंगमंच से जोड़ने का श्रम किया है। उनके सामने पाठकों के साथ–साथ दर्शक भी उपस्थित रहते हैं और इसीलिए उनके नाटक रंगमंच पर सफलतापूर्वक अभिनीत किये जा सके हैं।

'आषाढ़ का एक दिन' तीन अंकों का नाटक है। नाटक का आरम्भ बादलों की गर्जन और मूसलाधार वर्षा से होता है। 'आषाढ़ का पहला दिन और ऐसी वर्षा माँ। ... ऐसी धारासार वर्षा दूर–दूर तक की उपत्यकाएँ भीग गयी। ... और मैं भी तो ! देखो ना माँ, कैसी भीग गयी हूँ।' मल्लिका भीगती हुई घर के अन्दर प्रवेश करती है। माँ को उसकी भावुकता रास नहीं आती है। इसी पहले अंक में मल्लिका की भेंट कालिदास से होती है। कालिदास एक घायल हरिण शावक का उपचार करता है तथा वह उस शावक को राजपुरुष दन्तुल को देने से इन्कार कर देता है। कालिदास को उज्जयिनी में राजकवि का सम्मान प्राप्त होता है। मल्लिका उसे भारी मन से विदा देती है। 'नहीं विदा तुम्हें नहीं दूँगी। जा रहे हो इसलिए केवल प्रार्थना करूँगी कि तुम्हारा पथ प्रशस्त है।'

प्रथम और द्वितीय अंक के मध्य कुछ वर्षों का अन्तराल है। इस अंक में ज्ञात होता है कि कालिदास उज्जयिनी में बस गये हैं और वहाँ पर 'कुमारसम्भव', 'मेघदूत' आदि नाटकों की रचना की है तथा गुप्तवंश की दुहिता 'प्रियगुंमंजरी' से विवाह भी कर लिया है और कश्मीर का शासन भार सम्भाल लिया। प्रियगुंमंजरी, मल्लिका से भेंट करती है परन्तु कालिदास मल्लिका से भेंट करने नहीं आता हैं। दोनों के मध्य लम्बी वार्तालाप होती है और मल्लिका किसी राज अधिकारी से विवाह करने व कश्मीर जाने का निमन्त्रण ढुकरा देती हैं।

तृतीय अंक में कुछ और वर्षों का अन्तराल दिखाया गया है इस अंक में ज्ञात होता है कि सम्राट का निधन हो गया है और विद्रोही शक्तियाँ सिर उठा रही हैं। कालिदास ने कश्मीर छोड़ दिया है। मल्लिका गहरी यातना में है, तभी कालिदास का प्रवेश होता है। कालिदास के मन में अब भी मल्लिका के लिए प्रेम है। 'एक आकर्षण सदा मुझे उस सूत्र की ओर खींचता था जिसे तोड़कर मैं यहाँ से गया था। यहाँ की एक–एक वस्तु में जो आत्मीयता थी वह यहाँ से जाकर मुझे कहीं नहीं मिली।' मोहन राकेश ने लम्बे–लम्बे संवादों के माध्यम से कालिदास की कथा का चित्रण किया है। आज के अन्तर्द्वन्द्व के रूप में मल्लिका, कालिदास की अनुपस्थिति में विलोम से विवाह कर लेती है। क्योंकि वह भी समय की गति के आगे विवश थी। कालिदास क्षण भर रूककर बाहर चला जाता है। मल्लिका बच्ची को गोद में लेकर कालिदास को देखती रहती है।

डॉ. सुषमा अग्रवाल ने भी मोहन राकेश के नाटकों के सन्दर्भ में कहा है कि 'वर्तमान पीढ़ी का हिन्दी में इतना प्रबुद्धै, इतना मौलिक और जीवन का ऐसा चित्रकार दूसरा नहीं है, जिसने कथावस्तु, चरित्र, संवाद, दृश्य संयोजन, रंगमंचीय निर्देश में इतने सधे नाट्य प्रयोग करके ख्याति पायी हो जितनी कि राकेश ने।' अतः स्वातन्त्र्योत्तर नाट्य साहित्य में मोहन राकेश का स्थान उस शिखर पर है, जहाँ आज भी कोई नाटककार पहुँच नहीं सका है।

6.3.2 चरित्र

मोहन राकेश का सम्पूर्ण नाट्य साहित्य आधुनिक युग की विसंगतियों का प्रतिबिम्ब है। उनके नाटकों के चरित्र अपने अस्तित्व के संकट के प्रति सतर्क होने के कारण या तो परिस्थितियों से अनुवर्तित होते हैं या यथास्थिति में जीने के लिए बाधित हैं अथवा उनमें परिस्थितियों से बाहर निकलने की तीव्र इच्छा एवं छटपटाहट दिखाई पड़ती है।

मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में बारह चरित्र हैं जिनमें से सात पुरुष चरित्र और पाँच स्त्री चरित्र हैं। पुरुष चरित्रों में कालिदास, विलोम, मातुल राजपुरुष निक्षेप, अनुस्वार और अनुनासिक हैं तो नारी चरित्रों में मल्लिका, अम्बिका, प्रियंगुमंजरी, रंगिनी और संगिनी है। इस नाटक में कालिदास को नायक और मल्लिका को नायिका का स्थान प्राप्त है। 'नाटक के प्रायः सभी प्रमुख पात्रों के चरित्रांकन में राकेश ने मनोवैज्ञानिक पद्धति का आश्रय लिया है कालिदास और मल्लिका के चरित्र राकेश की आत्मा के ही दो पहलू प्रतीत होते हैं।'

इस नाटक के चरित्रों में बाहरी संघर्ष नहीं है बल्कि आन्तरिक संघर्ष को दर्शाया गया है। कालिदास, मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' का नायक है। इस नाटक में कालिदास का चरित्रांकन ऐतिहासिक पारम्परिक कालिदास से इतना अलग है कि मोहन राकेश को इस सम्बन्ध में कई बार समीक्षकों एवं नाट्य रसिकों को अलग से स्पष्टीकरण भी देना पड़ा। कालिदास का चरित्र जो इस नाटक में प्रस्तुत किया गया है वह चरित्र दायित्व ज्ञान, शून्य, स्वार्थी, आत्मसीमित, पलायनवादी कवि के रूप में अंकित किया गया है। अपनी प्रेमिका मल्लिका से बिना विवाह किये राज्याश्रय स्वीकार कर राजधानी चले जाना, वहाँ जाने के पश्चात् उसकी कोई खबर तक न लेना, वहीं पर राजकुमारी प्रियगुंमंजरी से विवाह करना और कश्मीर का शासक नियुक्त हो जाना। कश्मीर का शासक नियुक्त होने के पश्चात् कश्मीर जाते समय मल्लिका से न मिलना, पराजित और प्रताड़ित होने के बाद पुनः आश्रय के लिए मल्लिका के पास वापस लौटना, किसी भोले बालक की तरह ऐसी भोली कल्पना करना कि मल्लिका और उसके वातावरण में कुछ भी परिवर्तन नही हुआ होगा, परिवर्तन का रूप देखकर चौंकना तथा एकदम से आकाश से गिरना, ये सब नाटक के कालिदास का आचरण है। ऐतिहासिक कालिदास का आचरण है आदर्श आजन्म, शुद्धता, फल की प्राप्ति के लिए अन्त तक कर्म सत्य के लिए सर्वस्व त्याग की भावना, मितभाषण, सन्तान की प्राप्ति के लिए विवाह, जीवन की चारों अवस्थाओं का पालन करना आदि सम्मिलित है। 'आषाढ़ का एक दिन' का कालिदास ऐतिहासिक कालिदास से बिल्कुल भिन्न है। 'आषाढ़ का एक दिन' का कालिदास महान नहीं है क्योंकि उसके चरित्र में आम आदमी के सदृश्य स्वार्थ, महत्वकांक्षा और सुविधा का मोह अन्तर्व्याप्त है।'

उसे स्वयं अपने पर विश्वास नहीं था कि उज्जयिनी जाने पर वहाँ का वातावरण उसे घेर लेगा। वह वहीं का हो जायेगा और उसके जीवन की दशा बदल जाएँगी और ऐसा सचमुच हुआ वह जिस कल की तलाश में भटकता रहा, खण्डित और टूटता रहा वह कल उसके जीवन में नही आया। वह मल्लिका से कहता है कि– 'जिस कल की मुझे प्रतीक्षा थी वह कल कभी नहीं आया और मैं धीरे–धीरे खण्डित होता गया। और एक दिन... एक दिन मैंने पाया कि मैं सर्वथा टूट गया हूँ। मैं वह व्यक्ति नहीं हूँ जिसका इस विशाल के साथ कुछ भी सम्बन्ध था।' ओमप्रकाश भाटिया अराज का कथन है कि– 'आषाढ़ का एक दिन' का नायक कवि कालिदास भले ही अपने कला कौशल में महान हो किन्तु प्रेमी के रूप में वह असफल और व्यक्ति के रूप में स्वार्थी है।''

मोहन राकेश ने कालिदास को नाटक का नायक कहा है और मल्लिका नाटक की नायिका के रूप में प्रतीत होती है। वह धुरी है जिसके चारों तरफ नाटक के सभी पात्र घूमते रहते हैं। सम्पूर्ण नाटक उसकी छाया से अनुप्राणित

है। यद्यपि वह नायक की परिणीता नही बन सकी, किन्तु नायिका का पद मल्लिका को ही प्राप्त है। कारण, वही एक मात्र नाटक की ऐसी पात्र है जिसके चारों तरफ नायक के जीवन की समूची स्थितियाँ घूमती हैं। 'मल्लिका कहीं भावनात्मक पवित्र प्रेम की उपासिका प्रतीत होती है तो कही प्रियंगुमंजरी के प्रस्तावों को नकारती स्वाभिमानिनी। मल्लिका के चरित्र में जितना समर्पण भाव है उतना ही आत्मविश्वास, दृढ़ता और स्पष्टवादिता भी है।'

मल्लिका का चरित्र एक भोली निश्छल ग्रामप्रिय और कविप्रिया बाला का चरित्र है वह कालिदास से निश्छल रूपी प्रेम करती है वह कालिदास के लिए किसी से भी टकरा सकती है। माँ से लेकर मातुल, विलोम और राज्य कर्मचारियों तक। एक स्थान पर वह कहती है– 'सच तो यह है माँ कि ग्राम के अन्य व्यक्तियों की तरह तुम भी उन्हें सन्देह और वितृष्णा की दृष्टि से देखती हो।' मल्लिका का मर्मस्पर्शी, भावुकता से ओत–प्रोत बलिदानी चरित्र–चित्रण इन गुणों में सर्वप्रमुख है। वह कालिदास की असाधारण प्रतिभा को पहचान कर अपने स्नेह द्वारा उसकी कला को उत्तेजना प्रदान करती है। उसके स्वाभिमान की रक्षा के लिए व्यग्र रहती है। वह चाहती तो कालिदास को राजधानी जाने से रोक सकती थी, उससे विवाह कर सकती थी परन्तु वह अपने अधिकारों का विसर्जन करती हुई आग्रह पूर्वक उसे राजधानी भेजती है।

विलोम इस नाटक का सर्वाधिक सजीव एवं महत्वपूर्ण चरित्र है। विलोम की दृष्टि अन्य पात्रों की अपेक्षा अधिक व्यवहारिक है। भावनाएँ उसे प्रभावित नही करती है लेकिन व्यवहारिक जीवन में वह अधिक चतुर है और बड़ा संयमित भी है। नाटक के प्रथम अंक में ही मोहन राकेश ने विलोम के द्वारा उनकी चारित्रिक विशेषताओं को अच्छी तरह से उद्‌घाटित करवाया है – 'विलोम क्या है ? एक असफल कालिदास और कालिदास ? एक सफल विलोम।' कालिदास से बराबर टकराने वाला यदि कोई पात्र इस नाटक में है तो वह एक मात्र पात्र विलोम ही है। वह कालिदास का प्रतिद्वन्द्वी है एवं मल्लिका को प्रेम करता है तथा अन्त में वह उसको शरीर से प्राप्त भी करता है। विलोम की चतुराई वाकपटुता और व्यवहारिकता के समक्ष कालिदास का चरित्र कहीं–कहीं फीका–सा प्रतीत होने लगता है– 'ऐसे भी स्थल आते हैं जहाँ विलोम नायक के रूप में उभरने लगता है और कालिदास एक खलनायक जैसी स्थिति में खड़ा दिखाई देता है।' देखने की बात यह है कि जो कालिदास प्राप्त करना चाहता था वह विलोम प्राप्त करता है और जो विलोम प्राप्त नहीं कर सका वह कालिदास ने प्राप्त किया– 'वस्तुतः कालिदास के प्रतिद्वन्द्वी के रूप में उसकी सृष्टि की गयी है और जिसके माध्यम से कालिदास के व्यक्तित्व का मानवीय रूप उभर सका है। 'विलोम के माध्यम से मोहन राकेश ने द्वन्द्व और यथार्थ, असफलता और सफलता के बीच जीते हुए आज के मानव के बाहरी प्रयत्नों और व्यवहारवादी दृष्टि को अभिव्यंजित किया है।'

नाटक में प्रियंगुमंजरी को अधिक अवसर नहीं मिला है। वह राजकन्या है जिसका विवाह कालिदास से होता है। उनके चरित्र में विनम्रता, कुशलता, व्यावहारिक शिष्टता और राजनीति में निपुणता है। साथ–ही–साथ एक स्त्री और पत्नी के रूप में मल्लिका के समक्ष हीनता, ईर्ष्या और घबराहट भी है। अम्बिका जो मल्लिका की माँ है एक यथार्थवादी चरित्र है उसे अपनी बेटी मल्लिका से अधिक स्नेह है परन्तु वह कालिदास के साथ सम्बन्ध को लेकर अत्यन्त क्षुब्ध है।

वह भावना में विश्वास न करके कर्म में विश्वास करती है। मातुल एक अवसरवादी पात्र है वह जीवन में कोई भी अवसर खोना नहीं चाहता है इसलिए मल्लिका से कालिदास के विषय में कहता है– 'मेरी समझ में नहीं आता कि इसमें क्रय–विक्रय की क्या बात है। सम्मान मिलता है, ग्रहण करो। नहीं तो कविता का मूल्य ही क्या है।' दन्तुल एक राजपुरुष है जो सत्ता वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है– 'उसका साधिकार प्रवेश हिंसक वृत्ति, कठोर हृदय, कठोर वचन, अंहकार, अधिकार की लिप्सा और असंयमित भाषा उस वर्ग की मनोवृत्ति का ही बड़ा सफल उदाहरण है।'

इसके अतिरिक्त निक्षेप जो एक ग्राम पुरुष है तथा नाटक को आधुनिक सन्दर्भ में प्रस्तुत करने वाले पात्रों में रंगिणी, संगिनी और अनुस्वार तथा अनुनासिक भी मुख्य पात्र है। इस नाटक के सम्पूर्ण चरित्रों को देखने के पश्चात् यह प्रतीत होता है कि मोहन राकेश ने पहली बार हिन्दी नाटक में छोटे–छोटे पात्रों को भी उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व प्रदान किया है। उनकी उपस्थिति नाटक में अनिवार्य और महत्वपूर्ण है तथा नाटकीय अर्थ और रंगमंचीय अर्थ गरिमा से उन्हें संयुक्त कर दिया है।

6.3.3 संवाद

संवाद अथवा कथोपकथन को नाटक का तृतीय विधायक उपकरण माना जाता है किसी भी कृति के संवादों का सम्बन्ध पात्रों के चरित्र–चित्रण एवं कथानक के विकास से होता है। परन्तु जब हम नाटक के विषय में बात करते हैं तो अन्य गद्य–विधाओं की अपेक्षा इसमें संवादों का अधिक महत्व है, क्योंकि यहाँ नाटककार को जो कुछ प्रतिक्रिया व्यक्त करनी होती है तो उसे वह केवल पात्रों के संवादों के माध्मय से ही व्यक्त कर सकता है। अपनी ओर से वह कुछ भी नहीं व्यक्त कर सकता है क्योंकि नाटककार को अन्य कोई सुविधा उपलब्ध नहीं होती है। वह केवल पात्रों पर ही निर्भर रहता है। वह अपना सम्पूर्ण कथ्य केवल पात्रों के संवादों के माध्यम से ही सम्प्रेषित कर सकता है। संवाद जितने अधिक सरल, संक्षिप्त, पात्रानुकूल, स्वाभाविक, अभिनयात्मक एवं प्रभावक होंगे, घटना और चरित्रों में उतनी ही सजीवता और विशिष्टता आयेगी। नाटककार में चुस्त चुटीले एवं प्रसंगानुकूल संवाद प्रस्तुत करने की अद्‌भुत क्षमता होनी चाहिए।

मोहन राकेश संवाद लिखने में सिद्धहस्त हैं। उन्होंने अपने नाट्य साहित्य में जो संवाद प्रयुक्त किये है। उनमें सजीवता, मार्मिकता, सुघड़ता, संक्षिप्तता, पात्रानुकूलता, प्रसंगानुकूलता, यथार्थपरकता एवं व्यंग्य के दर्शन होते हैं इसीलिए डॉ. गोन्विद चातक जी कहते हैं कि– 'प्रतीकों, बिंबों, संवादों और स्थितियों के आयोजन में वे एक जागरूक कलात्मक दृष्टि का परिचय देते हैं। मोहन राकेश ने अपने नाटकों में संवाद, सजीवता और वास्तविकता का अत्यन्त मोहक संचार कर नाटक को एक भव्य कलापूर्ण कृति की महत्ता प्रदान की है। इसका मुख्य कारण यह था कि वह अपने लेखन के प्रति पूर्ण ईमानदार थे। अनीता ने भी उनके विषय में कहा है कि– 'राकेश जी सिर्फ व्यवहार में ही नही बल्कि अपने लेखन में भी उतने ही ईमानदार थे।' उनके नाटकों में पात्रों द्वारा प्रयुक्त संवादीय गुण देखा जा सकता है।

'आषाढ़ का एक दिन' रंगमंचीय नाटक है इस नाटक के संवादों की प्रमुख विशेषता यह है कि वे भावात्मक और बहुत ही संक्षिप्त और पैने हैं। उनमें सार्थकता, मार्मिकता एवं रोचकता का सुन्दर संयोजन किया गया है। मल्लिका और कालिदास का निम्न संवाद बड़ा संवेदनशील और मार्मिक है।

"मल्लिका : द्वार बन्द रहने दो। तुम जो बात कर रहे हो करते जाओ।

कालिदास : देख लो कौन आया है ?

मल्लिका : वर्षा का दिन है कोई भी हो सकता है। तुम बात करते रहो। वह चला जायेगा।

मल्लिका : क्या सोच रहे हो ?

कालिदास : सोच रहा हूँ कि वह आषाढ़ का एक दिन था। ऐसे ही घाटी में मेघ भरे थे और असमय अंधेरा हो गया था। मैंने वादी में एक आहत् हरिण शावक को देखा था और उठाकर यहाँ ले आया था। तुमने उसका उपचार किया था।

मल्लिका : और भी कुछ सोच रहे हो।

कालिदास : और सोच रहा हूँ कि उपत्यकाओं का विस्तार नहीं है। पर्वत शिखर की ओर जाने वाला मार्ग भी वही है। वायु में वैसी ही नमी है। वातावरण की ध्वनियाँ भी वैसी ही हैं।

मल्लिका : और ?

कालिदास : और कि वही चेतना जिसमें कम्पन्न होता है। वही हृदय है, जिसमें आवेश जगता है। परन्तु .... परन्तु यह कोरे पृष्ठों का महाकाव्य तब नही लिखा गया था।

उपरोक्त कथन मल्लिका और कालिदास की भावनाओं को प्रतिबिम्बित करने के कारण बड़ा ही मार्मिक और अनुभूतिपूर्ण बन गया है। इस संवाद की भाषा पात्रानुकूल है। इस कारण उसकी नाट्यभाषा में पात्रों की विशेषताओं के अनुकूल शब्द–संयोजन, वाक्यों का स्वरूप तथा संवाद–योजना का सुन्दर समावेश हुआ है। नाटक मूलरूप में एक रंगमंच कीवस्तु है और पात्रों को मंच पर अनिवार्यतः आकर अपनी बात कहनी होती है।

अतः संवादों की उपादेयता और अनिवार्यता नाटक में हमेशा बनी रहती है। अनिवार्यता इसलिए कि कथा की टूटी हुई कड़ियों को जोड़ने, उसे गति और प्रगति देने तथा पात्रों के चरित्रों का उद्घाटन करने और मूल मंतव्य को संप्रेषित करने के लिए संवाद नाटक के प्राण तत्व के रूप में स्वीकार किये गये हैं।

6.3.4 देशकाल

साहित्य में देशकाल एवं वातावरण की संयोजना करना अत्यन्त आवश्यक होता है। परन्तु नाट्य साहित्य में देशकाल एवं वातावरण का सबसे अधिक महत्व है क्योंकि बिना उपयुक्त देशकाल का निर्माण किये नाटककार अपने अभिप्रेत अथवा वर्ण्य विषय को संप्रेषित करने में असमर्थ रहता है। देशकाल की सृष्टि किये बिना नाटक का कथानक कमजोर रहता है। पात्रों का वस्त्र–आभूषण विधान, आचार व्यवहार, उनके कार्य व्यापार, उनका परिवेश, उनकी भाषा

आदि के प्रति नाटककार यदि सजग नहीं है तो वह अपने नाटक में यथार्थता और सजीवता की सृष्टि कदापि नहीं कर सकता है। यहाँ नाटककार की सूझ–बूझ उसका अनुभव और परिवेश सृष्टि की क्षमता ही उसके नाटक को सफल से सफलतम बनाने में योगदान देती है। अतः नाटक में जिस काल विशेष की कथा प्रस्तुत की जा रही हो, उसमें उसकी सामाजिक, आर्थिक, रातनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि परिस्थितियों का पूर्ण सफलता के साथ चित्रण होना अनिवार्य है।

मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' की कथा का आधार ऐतिहासिक है किन्तु वह खुलकर नहीं अपनाया गया है अपितु उसमें तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं भौगोलिक परिवेश को केवल छुआ गया है। 'ऐसा प्रतीत होता है कि नाटककार ने इस ऐतिहासिक कथानक का चुनाव महज इतिहास सम्बन्धित तथ्यों को अभिव्यक्ति देने के लिए न कर, नाटकीय स्थिति को प्रभावपूर्ण ढ़ंग से प्रकट करने के लिए किया है और इस दृष्टि से यह नाटक हिन्दी के तथाकथित ऐतिहासिक नाटकों की परम्परा से भिन्न है।' नाटक में आये संदर्भ पूर्णतः ऐतिहासिक नहीं हैं वे इतिहास मात्र का आभास भर देते हैं ऐसा लगता है कि मोहन राकेश ने इतिहास की ओर देखा भर है और देखने के बाद अपनी कल्पना का सहारा लेकर एक मौलिक और संवेदना प्रधान नाटक की सृष्टि कर दी है। नाटक में कवि कालिदास एक ऐतिहासिक पात्र है एवं उसके जीवन के कुछ प्रसंगों को कल्पना के माध्यम से दर्शाया गया है इस सम्बन्ध में नेमिचन्द्र का दृष्टिकोण है कि – 'अतीत की पृष्ठभूमि के बावजूद यह नाटक वास्तव में सृजनशील व्यक्ति के अंतर्विरोधों के सन्दर्भ में स्त्री–पुरूष सम्बन्धों का अन्वेषण करता है और इस प्रकार समकालीन प्रश्न को दूरस्थ ऐतिहासिक स्थिति से जोड़ कर देखता है। उसमें विचारों और दृष्टियों को, चरित्रों की जीवन स्थितियों से इस प्रकार मिला दिया गया है और उनका एक दूसरें से ऐसा नाटकीय समक्षीकरण है कि एक साथ कई स्तरों पर अर्थसंप्रेषण होता हैं।'

6.3.5 रचना शैली

राकेश ने नाट्य विद्या को थियेटर के सन्दर्भ में देखा, इसलिए उनकी रचना शैली में अधिकांशतः रंग–शिल्प की दृष्टि है। उनकी दृष्टि में लिखित नाटक के शास्त्रीय रूप की अपेक्षा नाटक का वह रूप घूमता था जिसे मंच पर प्रस्तुत होना स्वाभाविक था। उनकी दृष्टि संधियों संध्यंगों अथवा आदर्श नायक, नायिका–प्रतिनायक जैसे पक्षों की ओर न जाकर या कम जाकर उन कठिनाईयों और सीमाओं का अनुभव करती है जो मंचन में आशंकाएँ प्रस्तुत कर बाधा उपस्थित कर सकती थी,। उन कठिनाईयों के समाधान के प्रयास ही मोहन राकेश की रचना शैली के निर्णायक तत्व बने।

मोहन राकेश का सम्पूर्ण साहित्य उनके निजी व्यक्तित्व से अलग नहीं हैं। उनका पूरा स्वभाव, सोचने के ढ़ंग, कार्य व्यवहार यानी सम्पूर्ण रचना शैली और दृष्टि उनके साहित्य में देखी जा सकती है। मोहन राकेश अपने साहित्य में किसी विशेष साहित्यिक विचारधारा को लेकर नहीं चलते हैं और न ही किसी काल्पनिक सड़कों पर आते–जाते किन्हीं अमूर्त आकृतियों से वह अपना वैचारिक सम्बन्ध स्थापित करते चलते हैं। उनका मानना है कि रचना का सम्बन्ध, उसका जन्म किसी तीव्र अनुभूति से ही होना चाहिए। अपने मन की तंरगों के अनुसार चलते रहने वाला यह यायावर अपने लेखन में कहीं भी प्रतिबद्ध नहीं दिखाई पड़ता हैं यदि कहीं दिखाई पड़ता भी है तो वह है अपने लेखन और उसकी ईमानदारी,

जो अनुभवों के विस्तार से और गहराई से पैदा होती है। इसके लिए जीवन के अन्तिम दिन तक जिन्दगी से जुड़े रहना एक आन्तरिक अनिवार्यता है। जिन्दगी उसके लिए एक ऐसी ठोस वास्तविकता है जिससे निरन्तर जूझते रहना और उनमें से रास्ता निकालते रहना साहित्यकार की पहली शर्त है यही कारण है कि मोहन राकेश अपने जीवन के अन्तिम दिनों में भी अपने लेखन के प्रति जुड़े रहे।

जीवन के बदलते मानव मूल्यों ने मोहन राकेश की रचना शैली को एक व्यापक यथार्थ दृष्टि दी। उनकी आस्था भी और अनास्था भी इसी यथार्थबोध का परिणाम है। अनुभूति के मार्ग में आनेवाला छोटे से छोटा क्षण, हर छोटी सामान्य घटना, वस्तु, दृश्य या स्थिति को वह कितनी सूक्ष्मता से पकड़ते हैं।

मोहन राकेश ने अपने नाटकों में कुछ खास अनुभवों को हेर–फेर करके दोहराया है। यूँ तो साहित्य में नवीनता का प्रयोग, हर बार भिन्न रूप और नया प्रयत्न मोहन राकेश की मौलिक विशेषता है लेकिन यह नवीनता या प्रयोग का रूप कहीं से खोजकर लाया नहीं गया है। लेखकों की भी भिन्न–भिन्न दृष्टियाँ, रूचियाँ हुआ करती हैं। वें भी भिन्न–भिन्न प्रकार की रचना शैली को अपनाते हैं। कुछ शिल्प को महत्त्व देते हैं। शिल्प के नए–नए प्रयोग ढूँढ़ लाने में ही रचना की सार्थकता समझते हैं लेकिन कुछ रचना के आन्तरिक सौन्दर्य से ही उसके शिल्प को घटित होने देते हैं। परन्तु मोहन राकेश की शिल्प दृष्टि का अध्ययन करने पर यह अनुभव होता है कि वे शिल्प के प्रति बहुत ही सचेत और सतर्क थे।

मोहन राकेश के साहित्य को गहराई से समझने के लिए, उनमें छिपे भावों को पहचानने के लिए हमारे लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि पहले हम उनकी रचना शैली एंव रचना दृष्टि को समझें। मोहन राकेश का कहना है कि– 'कला के शिल्प को कला की वस्तु या कलाकार की अनुभूति से अलग करके देखना भी मुझे गलत लगता है', क्योंकि अनुभूति का अपना ही एक शिल्प होता है।' ये बात सच है कि हर युग की वास्तविक कला के अन्तर्गत उस युग की युगकथ्य सिमटी हुई होती है और उसी के अनुसार अपने अन्दर से अपने शिल्प का विकास करती है।

'आषाढ़ का एक दिन' की भूमिका में मोहन राकेश ने हिन्दी रंगमंच के स्वरूप में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाया था। 'हिन्दी रंगमंच की हिन्दी–भाषी प्रदेश की सांस्कृतिक पूर्तियों और आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करना होगा, रंगों और राशियों के विवेक को व्यक्त करना होगा। हमारे दैनंदिन जीवन के रागरंग को प्रस्तुत करने के लिए हमारे संवेदों और स्पन्दनों को अभिव्यक्त करने के लिए जिस रंगमंच की आवश्यकता है वह पाश्चात्य रंगमंच से कहीं भिन्न होगा।' इस भिन्नता का आधार शब्द और दृश्य की मान्यताएँ ही हैं। पाश्चात्य रंगमंच सुविधाओं, तकनीकी उपकरणों पर जिस रूप में आश्रित है, उस रूप में हिन्दी रंगमंच के लिए उसका अनुकरण न संभव है और न ग्राह्य। राकेश पाश्चात्य रंगमंच का अनुमोदन इसलिए नहीं करते, क्योंकि वह 'चकाचौंध का पर्याय' बन चुका है, जबकि वे रंगमंच का मूल तर्क सादगी और प्रतीकात्मकता को मानते हैं। पाश्चात्य रंगमंच परिचालक का रंगमंच है, भारतीय रंगमंच शब्द का रंगमंच है जिसमें नाटककार का दायित्व सबसे ऊपर है। राकेश 'नाटककार के रंगमंच' के सबसे बड़े समर्थक थे। राकेश के नाटक

रंगानुभूति से परिपूर्ण हैं। यों भी कहा जा सकता है कि रंग–तत्त्वों के समावेश और रंगमंचीय क्षमता की दृष्टि से वे अद्वितीय हैं। वे साहित्य और अभिनय पद्धति दोनों का अपूर्व समन्वय प्रस्तुत करते है। रंग– तत्त्व से परिपूर्ण व्यापार की सारी जीवन्त सुन्दरता सम्भावनाओं के साथ विद्यमान है। उनका कथ्य प्रेक्षक की संभावना को एकदम पकड़ लेता है। वस्तुतः पकड़ की यह क्षमता घटनाओं में न होकर चरित्र और उसके द्वन्द्व तथा इससे भी अधिक मानव–नियति के अंकन में निहित है। राकेश के नाटकों की रंग–क्षमता उन स्थितियों पर भी निर्भर करती है जिनमें वे पात्र को खड़ा करते हैं। वस्तुतः उनकी नाट्य–स्थितियाँ और पात्र उनकी नाट्य–कला का परिचय देते हैं। वे अजीब नाटकीय विडम्बनाओं और व्यंजनाओं से परिपूर्ण दिखाई देते हैं। अनुभूति का तत्त्व एक और उपादान है जो राकेश के रंगमंच को काव्यपूर्ण संस्कार प्रदान करता है। 'आषाढ़ का एक दिन' में मेघ के बदलते रंग रंगमंच पर एक पूरी कविता रच डालते हैं। उसमें राकेश सच्चे अर्थों में 'रंगमंच के कवि' दिखाई देते हैं। यह नाटक अनुभूति और उससे सिक्त शब्दाश्रयी बिम्बों का जैसा प्रयोग करता है वह रंगमंच पर एक विलक्षण अनुभव दे जाता है। पर इतना निश्चित है कि जो काव्यमय वातावरण वे अपने नाटकों में निर्मित करते हैं, वह काव्य–भाषा से नहीं, वरन् स्थितियों से निर्मित है। वे मंच पर जो कविता रचते हैं, वह शब्द की कविता नहीं, पूरी तरह रंगमंच का काव्य है जो शब्द पर निर्भर तो है पर उसके साथ–साथ पात्र की स्थितियों, मनःस्थितियों, मंचीय उपकरणों, प्रतीकों और बिम्बों पर भी आश्रित है। उदाहरण के लिए कालिदास और मल्लिका, मल्लिका और विलोम की नाट्य–स्थिति एक–ओर प्रेम की रससिक्ति तो दूसरी ओर संघर्ष अथवा विवशता की पीड़ा में नाटकीय ही नहीं, प्रेक्षक के लिए समसामयिक आस्वाद देने वाली भी है। उनके बीच जो घटित होता है, वह बिडम्बना कथानक की क्षमता के कारण उसे बाँधे रखती है। कथावस्तु की बनावट में, क्रिया– व्यापार, बिम्ब विधान, पात्रों की सम–विषम सृष्टि तथा तनावपूर्ण कारुणिक कथा– स्थितियाँ ऐसा बहुत कुछ है जो उसे एक गहन अनुभव दे जाता है।

सर्जक अनुभूति के साथ वातावरण की सृष्टि राकेश के रंग–शिल्प की सबसे बड़ी विशेषता है। वस्तुतः अपने नाटकों के लिए ऐसा दृश्य विधान चुनते हैं जो इस घटना या पात्र को पृष्ठभूमि ही प्रधान नहीं करता वरन् मानवीय क्रिया–कलाप के लिए एक आधार भी प्रस्तुत करता है। मोहन राकेश दृश्य–विधान के द्वारा एक अन्तरंग वातावरण जुटाने में अद्भुत कौशल दिखाते हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' में मेघ द्वारा प्रस्तुत वातावरण नाटक के केन्द्र में स्थित हो जाता है। वह मल्लिका, कालिदास, मातुल, विलोम, अम्बिका–सबको अपने–अपने ढंग से छूता है। इसके अतिरिक्त इस नाटक में अर्थपूर्ण दृश्य–विधान का आयोजन हुआ है जिसका प्रमुख अंग मल्लिका का वह प्रकोष्ठ है जो उसी के साथ हर अंक में उजड़ता जाता है। पहले अंक में वह पुता है, उसमें बीच में गेरू के स्वास्तिक चिह्न बने हैं। हल्दी से कमल और शंख बनाए गए हैं। दूसरे अंक में वे सब बुझे–बुझे दिखाई देते है; पुताई उजड़ जाती है, बर्तन कम होते जाते हैं और वस्त्र फटते जाते हैं। तीसरे अंक में सब–कुछ जर्जर और अस्त–व्यस्त है–कुम्भ फूटा है; स्वस्तिक चिह्न लगभग मिट चुके हैं और बर्तनों पर स्याही चढ़ चुकी है। यह दृश्य–विधान स्वयं ही मल्लिका के विघटन की कहानी कहता है।

राकेश की रंगमंचीय अवधारणा में अनुभूति और वातावरण का तो महत्त्व है। वातावरण की सृष्टि में पात्रों की अनुभूतियों को वे बड़ी बारीकी से चित्रित करते हैं। कुंवर जी अग्रवाल ने ठीक कहा है –'मोहन राकेश का नाटककार

के रूप में सफलता का एक रहस्य यह भी है कि वे पात्रों के तात्कालिक क्रमिक अनुभव को ब्यौरे के साथ उपस्थित करते हैं जिससे दर्शक अन्तर्मुख हो अपने ही अनुभव संसार को टटोलने की ओर उन्मुख होता है। 'आधुनिक पाठक यद्यपि रसानुभूति पर बल नहीं देता, किन्तु इन तत्वों को राकेश के नाटकों में साधारणीकरण और रसानुभूति में सहायक मानने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। राकेश के नाटक एक पूरा भावात्मक वातावरण उपस्थित करते हैं और प्रेक्षकों में अद्‌भुत संवेदन–क्षमता जगाते हैं। उनके नाटकों में भावों का प्रवाह और नाटकीय लय–रचना मिलती है।

पात्रों को भी राकेश कहीं–कहीं सामान्य रहने नहीं देते। मल्लिका, विलोम, अम्बिका, श्यामांग एक ऐसे वैचित्र्य के साथ उभरते हैं कि उनके रंग यथार्थ पर पुत जाते हैं। इस प्रकार के प्रयोग नाट्यानुभव को कहीं प्रतीकात्मक वातावरण प्रदान करते हैं तो कहीं नाटककार की आत्मपरकता को उभारते हैं। राकेश सामान्य को असामान्य और असामान्य को सामान्य रूप में प्रस्तुत करते हैं। कालिदास महान कवि होकर भी सामान्य है और विलोम सामान्य होकर भी असामान्य है। वे उन्हें मानवीय धरातल पर चित्रित करते हैं। अम्बिका भी ऐसी ही है। वस्तुतः राकेश के कई पात्रों के खंडित व्यक्तित्व, विक्षुब्धता और विक्षिप्तता के पीछे कोई युक्ति कार्य करती दिखाई देती है जो प्रेक्षक के मन पर अपना प्रभाव छोड़ती है।

राकेश की नाट्‌य संरचना में रंगमंच की कई अन्य विधियों का भी सफल प्रयोग मिलता है। उदाहरण के लिए वे अपने नाटकों में घटना–क्रम, नाट्‌य–स्थिति आदि का इस प्रकार नियोजन करते हैं कि दृश्य–बिम्ब प्रभावशाली रूप से उभर सकें। पात्रों की भावमुद्राएँ उभारने में भी वे कुशल हैं। विशेषतः उनके नाटकों के अन्त अर्थपूर्ण भावमुद्राओं की सृष्टि करते हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' में मूसलाधार वर्षा में कालिदास का मल्लिका के द्वार से चला जाना और मेघ का गर्जन और वर्षण का दृश्य–बिम्ब नाटक को अर्थवत्ता देता है। राकेश ऐसा दृश्यबन्ध प्रदान करते हैं जिसमें पात्रों का भाव जगत् प्रतिबम्बित होता है।

राकेश रंगमंच के समर्थ सर्जक के रूप में सामने आते हैं। वे अपने नाटकों के रंग–तत्व को नाट्‌य–स्थितियों, पात्रों के द्वन्द्व, उसकी भंगिमाओं और बदलती आकृतियों और संवादों में डालने में कुशल हैं। उनके नाटकों का शब्द–रूप दृश्य रूप के अनुरूप है और वे सभी नाटकीय तत्वों का इस तरह प्रयोग कर दिखाते हैं कि रंगमंच एक सही बिम्ब उभारने में सहायक हो। उनके रंग–संकेत इस बात के उदाहरण हैं कि वे कितने जागरुक कलाकार थे। राकेश ने रंग–संकेत उसी सर्जक कलाकार की कलात्मक भावना से लिखे हैं, जिस कुशलता से उन्होंने अपने नाटकों में संवाद रचे हैं। ये रंग–संकेत नाटक हैं। वे रंगमंच पर बिम्ब–विधान करते हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' का प्राकृतिक परिवेश बहुत विस्तृत है। यद्यपि सभी नाटक कमरे में घटित होते हैं, पर कमरे के बाहर के परिवेश को भी वे नहीं भूलते।

राकेश ने अपने नाटकों के लिए जिस मंच की कल्पना की थी, वह सम्भवततः 'बॉक्स सेट' पर आधारित थी। इस परिकल्पना का सबसे बड़ा लाभ यह है कि उनके नाटकों में दृश्यों की बहुलता नहीं है। वे एक ही दृश्यबन्ध पर खेले जा सकते हैं। एक अंक और दूसरे अंक के बीच उनमें काल का व्यवधान भी अधिक नहीं। 'आषाढ़ का एक दिन'

में काल की अवधि का विस्तार अवश्य है, किन्तु मेघ के माध्यम से प्रवहमान चेतना और स्मृति सारे दृश्यों को एक सूत्र में पिरो देती है, जिससे काल के व्यवधान का कहीं आभास ही नहीं होता। वस्तुतः अखंड काल का प्रवाह मनोवैज्ञानिक युक्तियों से राकेश के नाटकों में सर्वत्र बना रहता है। वे चेतना–प्रवाह, बिम्ब–विधान की सूत्रता और रंगक्रियाओं का मनोवैज्ञानिक प्रयोग करते हैं। प्रेक्षक की अनुभूतियों की घनीभूत अन्विति भी उसका एक पहलू है। दि्क और काल की एक अन्विति भी राकेश के नाटकों को मंचीय सम्भावनाओं से परिपूर्ण करती है, किन्तु एक दृश्यबन्ध के कारण उनको पर्याप्त क्षति भी पहुँची है। एक ही स्थान की सीमा के कारण जो कुछ उस स्थान पर घटता है, उसे मंच पर दिखाना सरल हैं, पर जो दूसरे स्थान पर दूसरी परिस्थिति में घटता है, उसे समस्त नाटकीय क्रिया–कलाप के साथ प्रस्तुत करना सम्भव नहीं होता। इसीलिए बहुत–सी बातों को, जो रंगमंच पर बहुत नाटकीय सिद्ध होती, नाटककार को सूच्य रूप में प्रस्तुत करने की विवशता का सामना करना पड़ा। इससे नाटक के अन्तिम अंक पर बहुत बोझ पड़ा है। उदाहरण के लिए कालिदास के उज्जयिनी प्रवास और कश्मीर के शासक होने के सारे अनुभव को लम्बे संवाद के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वह कश्मीर जाते हुए मल्लिका से क्यों मिला या उसकी सर्जनात्मक क्षमताओं पर राजसत्ता का क्या प्रभाव पड़ा– इन्हीं प्रश्नों का उत्तर देने के लिए वह एक लम्बी व्याख्या देने को बाध्य होता है।

वस्तुतः सब–कुछ रंगमंच पर दिखाना सम्भव नहीं है। नेपथ्य भी नाटक और रंगमंच का अनिवार्य अंग है और उसकी योजना एकदम अरंगमंचीय हो, ऐसा नहीं कहा जा सकता। मोहन राकेश ने अपने नाटकों के अन्त में नेपथ्य में घटित कथा–स्थितियों का जैसा कथन किया है, उससे धारा–प्रवाह में भले ही बाधा आई है, परन्तु नाटक बिखराव से बचे हैं। दृश्यबन्ध की एकता के लिए एक ही दृश्यबन्ध पर दो या तीन अंकों में सारी कथावस्तु को समेटने के कारण सूच्य सामग्री का समावेश स्वाभाविक है। प्रश्न इतना ही है कि वह सब प्रेक्षक अपने में रमाने में समर्थ है ? दृश्यबन्ध की इस सीमा और घर के बन्द कमरों में तनाव से जूझते पात्रों को देखते हुए राकेश के नाटक 'बॉक्स सेट' के लिए ज्यादा उपयुक्त ठहरते हैं। किन्तु रंग–दृष्टि से सीमित रंगमंच से बाहर निकलना भी जरूरी होता है। दिक् का व्यापक अनुभव देने के लिए मुक्ताकाशी रंगमंच ज्यादा उपयुक्त रहता है। 'आषाढ़ का एक दिन' के लिए उन्मुक्त वातावरण अपेक्षित है। इसलिए नाटकार की अपनी कल्पना से भी भिन्न रूप में मुक्ताकाशी रंगमंच पर भी बड़ी सफलता से खेला गया।

शब्द की क्षमता भी रंगमंच की बड़ी शक्ति होती है। वह भाषा पर भी निर्भर करती है और इसके साथ ही दृश्य पर भी। राकेश मानते थे कि दृश्य नाटक का अनिवार्य तत्त्व है पर वह भी भाषा पर निर्भर है। वे दृश्य को शब्द की ही एक परिणति मानते थे। संवाद के द्वारा नाट्य–स्थिति को दृश्य के अनुरूप गढ़ने में भी वे अपूर्व क्षमता दिखाते हैं। उसे दृश्य, स्थिति और अर्थ से जोड़कर वे विलक्षण प्रभाव उत्पन्न करते हैं। वे संवादों को एक विशिष्ट शिल्प में ढालकर, उन्हें व्यंजना, वक्रता, ध्वन्यात्मकता तथा पाठ से भिन्न अर्थ–गौरव प्रदान करते हैं। इस प्रकार की व्यंजना कहीं–कहीं शब्द, वाक्यों, पदलोप तथा अधूरे वाक्यों से भी साध्य हुई है। नाट्य–स्थिति की भाँति कहीं शब्दों पर आधारित नाटकीय व्यंग्य संवादों को अपूर्व चमत्कार प्रदान करता है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि राकेश ने लय और संसर्ग से अर्थ के आयाम उभारे हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' में अनुस्वार और अनुनासिक के संवादों की आन्तरिक लय स्थिति की विसंगति को उभारती है! अम्बिका के संवाद उसकी पीड़ा के मन्द लय में हैं। मल्लिका के संवादों में प्रारम्भ में क्षिप्रता (तेजी) है।

राकेश के नाटकों में सम्पूर्ण शब्द–तत्व रंग के साथ जुड़ा है। वे संवाद को क्रिया–व्यापार, दृश्य, मौन, नेपथ्य, बिम्ब आदि के साथ जोड़ने में सफल हुए हैं। संवाद को क्रिया से और क्रिया को नाटकीय अर्थ से जोड़ना राकेश के रंग–भाषणों की बहुत बड़ी उपलब्धि है। कई अवसरों पर उनमें शब्द क्रिया में बदल जाते हैं। भावना अस्तित्व का रूप ले लेती है और शब्द बहुत पीछे छूट जाते हैं। मल्लिका स्वेच्छा से कालिदास को उज्जयिनी भेज देती है, पर साथ ही अपने को संभाल भी नहीं पाती। तब शब्द जैसे भाव, अनुभाव और संचारियों में बदल जाते हैं–

अम्बिका : मल्लिका !

मल्लिका रुक जाती है। पर कुछ भी उत्तर न देकर मुँह हाथों में छिपा लेती है। अम्बिका उठकर धीरे–धीरे उसके पास आती है और उसे बाँहों में ले लेती है। सारा शरीर रुलाई से काँपता रहता है, पर गले से स्वर नहीं निकलता। अम्बिका की आँखें भर आती हैं और वह उसके काँपते शरीर को अपने से सटाए उसकी पीठ पर हाथ फेरती रहती है। फिर ओंठों और गालों से उसके सिर को दुलारने लगती है।

अम्बिका : अब भी रोती है ? उसके लिए ? उस व्यक्ति के लिए जिसने...।

शब्दों के बीच मौन का भी राकेश ने रंगमंचीय उपयोग किया है। मौन भी उनके नाटकों में एक नाटकीय क्षण होता है, जहाँ शब्द चुक जाते हैं, निरर्थक हो जाते हैं या जानबूझकर अनुपस्थित रहते हैं। राकेश ऐसा लम्बा शब्दहीन प्रयोग भी करते हैं जहाँ शब्द क्रिया में ढल जाता है और ऐसी निःशब्दता का भी जो क्षणिक होती है और प्रायः शब्दों के बीच होती है। ऐसी निःशब्दता के बारे में उनका कहना है, कि वह 'नाटकीय तनाव को वहन करने में सहायक होती है और वह प्रायः संवादों के बीच के अन्तराल पर निर्भर करती है। इसीलिए उन्होंने उसे शब्दों की यात्रा का एक पड़ाव माना है अथवा दोनों ओर के शब्दों को जोड़ने वाला अन्तराल।'

शब्दों के बीच की निःशब्दता के कलात्मक प्रयोग के राकेश बड़े हामी थे। 'आषाढ़ का एक दिन' में मल्लिका के द्वारा धारासार वर्षा में अपने उल्लास का बखान और उसकी प्रतिक्रिया में अम्बिका का सब–कुछ अनसुना कर अपने काम में लगा रहना सार्थक मौन का सुन्दर उदाहरण है। 'आषाढ़ का एक दिन' में एकाध स्थल पर शब्द के सन्दर्भ में नेपथ्य बड़ा अर्थवान हो जाता है। नेपथ्य प्रेक्षक की कल्पना को ही नहीं जगाता, रंगमंच का विस्तार भी करता है।

इसी प्रकार 'आषाढ़ का एक दिन' में नाटक के अन्त में जहां नेपथ्य में मेघ का गर्जन सुनाई देता है, वहां अन्दर से बच्ची के कुनमुनाने और रोने का शब्द भी कहीं नेपथ्य जैसी सार्थकता प्राप्त कर लेता है और इसी रूप में वह प्रभाव भी छोड़ता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि राकेश के नाटकों में रंगमंच के पीछे जो घटता है, वह रंगमंच पर घटित क्रिया–व्यापार को सघन बनाता है।

6.4 निष्कर्ष

अंततः कहा जा सकता है कि 'राकेश की मंच–चेतना परदों से प्रकाश की ओर बढ़ी है'– इस स्थापना में पर्याप्त सत्य है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनके पहले दो नाटक परदा उठने के निर्देष से प्रारम्भ होते हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' में अंक–विभाजन के लिए परदे को स्वीकर किया गया है। प्रकाश योजना के साथ–साथ संगीत की संभावनाओं को लेकर भी राकेश अपने नाटकों में प्रयोग कर रहे थे। तात्पर्य यह है कि राकेश गहरे रंगानुभव से जुड़े थे जिसका प्रमाण उनके रंग–शिल्प में विद्यमान है। कहा जाता है कि अभिनेता की हर गति और रंगचर्या को नाटककार ने बाँध देना चाहा है। इसको परिचालक और अभिनेता के विषय–क्षेत्र में दखल भले ही कुछ लोग मान लें, किन्तु इतना निश्चित है कि नाट्यानुभूति की भाँति रंगानुभूति भी नाटककार की अपनी चीज है। इसलिए नाटक की सृष्टि करते हुए एक विशेष रंग–शिल्प में ढालने और उसका स्वरूप निर्धारित करने का उसे पूरा अधिकार है। राकेश 'नाटककार के रंगमंच के प्रबल समर्थक' थे। और इस दृष्टि से उनका रंग–विधान एक जागरूक नाटककार की पहचान करवाता है।

6.5 कठिन शब्द – विडम्बना, अवधारणा, मनोवैज्ञानिक, अन्विति, रंग–विधान, जीवन्त, अन्तरंग, समसामयिक, प्रेक्षक, रससिक्ति, संरचना, वक्रता, पदलोप, व्यंजना, अनतराल, निशब्दता, परिचालक, क्षिप्रता ।

6.6 अभ्यासार्थ प्रश्न –

प्रश्न 1 रंगमंचीयता की दृष्टि के आधार पर 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक पर प्रकाश डालें।

प्रश्न 2 ' आषाढ़ का एक दिन' नाटक की संवाद योजना को स्पष्ट करें।

प्रश्न 3 ' आषाढ का एक दिन' नाटक की कथा योजना बताइए।

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. 'आषाढ़ का एक दिन' – मोहन राकेश

2. हिन्दी नाटकः उद्‌भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा
3. हिन्दी नाटक और रंगमंचः पहचान और परख – सं. डॉ. इन्द्रनाथ मदान
4. मोहन राकेश की रंग सृष्टि– जगदीश शर्मा
5. मोहन राकेश का नाट्य साहित्यः प्ररेणा एवं स्रोत – डॉ. राजेश्वर प्रसाद सिंह
6. हिन्दी का गद्य साहित्य – रामचन्द्र तिवारी
7. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास – बच्चन सिंह

*****

'बहुत बड़ा सवाल' की समीक्षा

7.0 रूपरेखा

7.1 उद्देश्य

7.2 प्रस्तावना

7.3 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी की समीक्षा

7.4 निष्कर्ष

7.5 कठिन शब्द

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.7 पठनीय पुस्तकें

7.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन उपरान्त आप 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी की समीक्षा द्वारा कथा में चित्रित पात्रों की दशा तथा मनोस्थिति से परिचित हो सकेंगे।

7.2 प्रस्तावना

'बहुत बड़ा सवाल' मोहन राकेश की एक व्यंग्यपूर्ण एकांकी हैं। इसमें लेखक ने कर्मचारियों के हित से संबंध रखने वाले बड़े–बड़े सवालों या देश के सामने उपस्थित बड़े–बड़े मुद्दों को उजागर किया है। आधुनिक युग की सभाओं, बैठकों, सोसाइटियों एवं संगठनों पर कटु व्यंग्य किया है। इस एकांकी में लेखक ने कर्मचारियों की निम्न स्तरीय वृत्ति की ओर संकेत किया है।

7.3 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी की समीक्षा

इस एकांकी में लेखक ने प्रत्येक क्षेत्र में छाने वाली नौकरशाही की निष्क्रियता को अभिव्यक्त किया है। देखा जाए तो राष्ट्रीय स्तर पर आज हमारे सामने अनेक समस्याएं हैं जिसका सामना हमें दिन–प्रतिदिन करना पड़ता है। इतनी समस्याओं व बाधाओं से जूझने के उपरान्त भी इनका हल करना असम्भव है क्योंकि यहां निरर्थक मीटिंग और बहस के अतिरिक्त कुछ नहीं है। एकांकी के आरम्भ में ही राम भरोसे और श्याम भरोसे द्वारा प्रतिदिन होने वाली मीटिंग की व्यर्थता का उपहास उड़ाते हैं क्योंकि वह भी जानते हैं कि मीटिंग के समाप्त होने के पश्चात कोई सकारात्मक पहलू नहीं निकल कर आता। दोनों रोज़–रोज़ की ऐसी मीटिंग से तंग पढ़ जाते हैं जिसका स्पष्ट उदाहरण राम भरोसे द्वारा मिलता है। ''ससुर रोज़–रोज़ मीटिंग होगी तो किसकी जान रहेगी? आज एक का जनम–दिवस होकर निकलता है तो कल दूसरे का मरन–दिवस आ जाता है। जनमें–मरें ये, धूल खाये राम भरोसे, श्याम भरोसे। (जोर से झाड़ता हुआ) सबेरे निकालो, तो शाम को चली आती है। शाम को निकाली, तो सबेरा नहीं होने देती।''

एकांकी की कथा बहुत ही संक्षिप्त है। कहीं पर भी अस्पष्टता देखने को नहीं मिलती। इस एकांकी में आधुनिक युग की मीटिंग, सभा, सोसाइटियों और संगठनों पर करारा व्यंग्य है। इस तथ्य का स्पष्टीकरण हमें इस एकांकी में देखने को मिलता है। मोहन राकेश ने बहुत बड़ा सवाल एकांकी में यह दिखाना चाहा है कि विभिन्न समस्याओं से जूझने के बाद भी हम उन समस्याओं व मुद्दों पर सतर्क नहीं रहते। उन पर कोई बातचीत न करके फालतू की बातों पर समय बर्बाद करते हैं। केवल योजनाओं पर चर्चा ही करते हैं। उसके निष्कर्ष तक नहीं पहुँचते। हम यूनियन तो बनाते हैं किन्तु सहयोग और संगठन में काम नहीं करते है। हर–एक का उद्देश्य एक–दूसरे पर कीचड़ उछालना ही रह गया है। कपूर अनुपस्थिति अध्यक्ष की निंदा अन्य पात्रों के साथ करते हुए कहता है–

कपूर : मैं पहले ही कहता था इस आदमी को चैयरमैन नहीं बनाना चाहिए, आज छुट्टी का दिन है, वैसे भी ठंड है घर में रजाई में दुबक कर सो रहा होगा। सॉरी... घर में नहीं होगा, वह होगा आज उसके यहाँ...।

संतोष : किसके यहाँ?

गुरप्रीत : प्लीज!

संतोष : नाम तो जान लेने दे।

गुरप्रीत : प्लीज! प्लीज! प्लीज!

कपूर : गुरप्रीत जी नाम जानती हैं।

संतोष : जानती है तू?

गुरप्रीत : मैं इसीलिए आप लोगों को मीटिंग में नहीं आना चाहती। यहाँ काम तो कुछ होता नहीं, बस इसी तरह की बातें होती रहती हैं।

कपूर : गुरप्रीत जी की सहेली है वह।

संतोष : अच्छा... वह?

कपूर : हाँ, वही।

संतोष : यह कब से?

कपूर : कब से? दो साल से तो मैं भी जानता हूँ।

संतोष : पर वह तो पहले...।

उपर्युक्त संवादों के माध्यम से सदस्यों के वैचारिक स्तर, उनकी मानसिकता, छिछलेपन और दायित्वहीनता का पता चलता है। मीटिंग का केन्द्र बिन्दु तो पेड वर्कर्स वेलफेयर सोसाइटी है लेकिन बैठक के सदस्य इस मुद्दे पर बात न करते हुए अपने छिछलेपन का परिचय देते हैं। सामाजिक कार्यक्रमों में भी हम व्यक्तिगत स्वार्थ, संकीर्ण मानसिकता व विचारधारा और अपने मन की गलीज क्षुद्रताओं का ही प्रदर्शन करते हैं। इसका प्रभाव हमें एकांकी में वर्णित उस मीटिंग से मिल जाता है जो 'ले ग्रेडवर्कर्स सोसाइटी' द्वारा आयोजित की जाती है। यह मीटिंग इस बात को साबित करती है कि मीटिंग की इस बैठक में केवल सेक्रेटरी शर्मा ही जल्दी पहुँचते हैं बाकि अन्य अपने ही मनमाने ढंग से उपस्थित होते हैं। कोई भी समय का पाबन्द नहीं है और न ही अपने दायित्व को समझते हैं । उदाहरण स्वरूप–

"शर्मा : (उठता हुआ) साढ़े पाँच हो गये आप लोगों के

मनोरमा : अभी कोई भी तो नहीं आया, सिवाय हमारे।

शर्मा : साढ़े छह् तक आराम से आयेंगे लोग। वक्त की पाबंदी तो सिर्फ एक आदमी पर है, क्योंकि वह कमबख्त सेक्रेटरी है।"

अध्यक्ष के अतिरिक्त अन्य सदस्य पहुँच पाते हैं लेकिन मुख्य विषय पर बात कोई नहीं करना चाहता। गुरप्रीत गुस्से में आकर मनोरमा से कहती है कि इस मीटिंग में काम की बातें तो होती नहीं हैं, बस यही सब होता है।

गुरप्रीत के कथन से स्पष्ट है कि विषय से सम्बन्धित चर्चा न करके बैठक के सदस्य एक–दूसरे पर रोक–टोक कर रहे हैं। वे आपस में ही लड़ते–झगड़ते हुए एक दूसरे पर कीचड़ उछाल रहे हैं। दूसरों की त्रुटियों की छानबीन करते हैं, अपनी बड़ी–से–बड़ी त्रुटि पर पर्दा डालते हैं। इसका प्रमाण तब मिलता है जब शर्मा 'लो पेड वेलफेयर सोसाइटी' के संदर्भ में अपना प्रस्ताव रखता है तो उस प्रस्ताव को शांतिपूर्वक सुनने के बजाये सभी बीच में बार–बार बाधा उपस्थित करते हैं। संगठन के कार्यक्रमों में एक–दूसरे की टांग खींचना उनके लिए हंसी–मज़ाक बन गया था। जिस कारण इस मुद्दे का कोई भी निचोड़ नहीं निकलता और सभी धीरे–धीरे इस बैठक को छोड़कर चले जाते हैं।

7.4 निष्कर्ष

मोहन राकेश ने इस एकांकी में तीखा व्यंग्य किया है और पात्रों के वार्तालाप से यह एकांकी और भी तीखी बन पढ़ती है। समाज में अनेक समस्याएँ व मुद्दे होने के उपरान्त हमें उन पर विचार–विमर्श करना चाहिए। आज हम और हमारा समाज दायित्वहीन हो गया है। हमें अपने कर्त्तव्य का न तो ज्ञान है और न ही मर्यादा पालन की आकांक्षा। आज सवाल मीटिंग या बड़ी–बड़ी संस्था व संगठन का नहीं है जितना संगठित होकर दायित्वबोध से जुड़े रहने का है। दुख की बात यह है कि हम मीटिंग को महत्व तो बहुत देते हैं किन्तु प्रत्येक मुद्दे व जीवन बोध से कट जाते हैं। फलतः हम उद्देश्य लेकर भी निरूद्देश्य हैं। यह एकांकी आज के भटके हुए समाज की एक तस्वीर प्रस्तुत करती है।

7.5 कठिन शब्द

1. निरूद्देश्य
2. दायित्व
3. त्रुटियां
4. क्षुद्रताओं
5. छिछलेपन
6. वैचारिक

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी की समीक्षा करें।

प्र2) निम्नलिखित गद्यांश की सप्रसंग व्याख्या करें–

"मैं पहले ही कहता था इस आदमी को चैयरमैन नहीं बनाना चाहिए, आज छुट्टी का दिन है, वैसे भी ठंड है घर में रजाई में दुबक कर सो रहा होगा। सॉरी... घर में नहीं होगा, वह होगा आज उसके यहाँ...।"

प्र3) एकांकी में गुरप्रीत बैठक को छोड़ने की बात क्यों करती है?

7.7 पठनीय पुस्तकें

1. 'बहुत बड़ा सवाल' – मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटक– बच्चन सिंह
3. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– नेमिचन्द्र जैन
4. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल
5. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक : मोहन राकेश के संदर्भ में– डॉ. रीता कुमार
6. रंगदर्शन– डॉ. नेमिचन्द्र जैन
7. हिन्दी नाटक उद्भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा

*****

'बहुत बड़ा सवाल' के प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण

8.0 रूपरेखा

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रस्तावना

8.3 'बहुत बड़ा सवाल' के प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण

8.4 निष्कर्ष

8.5 कठिन शब्द

8.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.7 पठनीय पुस्तकें

8.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन उपरान्त आप मोहन राकेश की एकांकी 'बहुत बड़ा सवाल' के पात्रों की चरित्रिक विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।

8.2 प्रस्तावना

कथा का विकास चरित्र पर निर्भर करता है साथ ही लेखक की मानसिकता एवं उसका उद्देश्य उसके द्वारा लिखित कथा चरित्रों के माध्यम से ही व्यक्त होता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक कथा में प्रमुख पात्र व गौण पात्र होते हैं जो अपनी भूमिका अदा करते हैं।

पूरी कथा प्रमुख पात्र के इर्द–गिर्द घूमती रहती है किंतु गौण पात्र कथा के विकास और प्रमुख पात्र की चरित्रिक विशेषताओं को उभारने में सहायक सिद्ध होते हैं।

पाठ्यक्रम में निर्धारित मोहन राकेश की एकांकी के प्रमुख पात्र

8.3 गुरप्रीत :– एकांकी में गुरप्रीत ही एक ऐसी नारी पात्र है जो शुरू से लेकर अंत तक अपनी शालीनता को बनाए रखती है। वह किसी की चापलूसी व निंदा की बातचीत में भाग नहीं लेती। उसके चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि किसी को भी अपनी हँसी व मजाक का पात्र नहीं बनाती। दूसरों की बातों की तरफ ध्यान न देते हुए अपनी सद्बुद्धि का प्रयोग करती है। उसके मन में किसी के प्रति कोई ईर्ष्या व द्वेष का भाव देखने को नहीं मिलता। वह बैठक में उपस्थित अन्य सदस्यों की तरह किसी पर लांछन नहीं लगाती। जिसका प्रमाण हमें तब मिलता है जब संगठन के अध्यक्ष की अनुपस्थिति में कपूर उनके चरित्र पर लांछन लगाते हुए कहता हैं– "मैं पहले ही कहता था, इस आदमी को चेयरमैन नहीं बनाना चाहिए। आज छुट्टी का दिन है, वैसे भी ठंड है, घर में रजाई में दुबककर सो रहा होगा। सॉरी... घर में नहीं होगा, वह होगा आज उसके यहाँ...।

संतोष : किसके यहाँ?

गुरप्रीत : प्लीज

संतोष : नाम तो जान लेने दे।

गुरप्रीत : प्लीज! प्लीज! प्लीज!

कपूर : गुरप्रीत जी नाम जानती है।

संतोष : जानती है तू?

गुरप्रीत : मैं इसीलिए आप लोगों की मीटिंग में नहीं आना चाहती। यहाँ काम तो कुछ होता नहीं, बस इसी तरह की बातें होती रहती हैं।

कपूर : गुरप्रीत जी की सहेली है वह।

संतोष : अच्छा... वह?

कपूर : हाँ, वही।

संतोष : यह कब से?

कपूर : कब से? दो साल से तो मैं ही जानता हूँ।

संतोष : पर वह तो पहले...।

कपूर : आप बहुत पुरानी बात कर रही हैं। लगता है आप शहर में नहीं रहतीं।

संतोष : (गुरप्रीत से) मैं जान सकती हूँ, मीटिंग कब शुरू होगी?

उपर्युक्त कथन द्वारा स्पष्ट है कि लो पेड वर्कर्स वेलफेयर सोसाइटी के सदस्यों की छिछली मानसिकता और उनके दायित्वहीनता के बोध का परिचय मिलता है। कपूर और संतोष दोनो अनुपस्थिति अध्यक्ष की निंदा और अनर्गल बातें करते हैं वहीं गुरप्रीत इन बातों में कोई भी रूचि नहीं दिखाती। वह अपनी समझदारी का परिचय देती है। 'प्लीज' जैसे शब्द का प्रयोग करके अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करती है। मीटिंग के संबंध में वह गंभीरता दिखाती है, जिसे सार्थक बनाने का प्रयास भी करती है। मीटिंग की असफलता देखकर वह सबसे पहले उठकर चली जाती है।

गुरप्रीत : (उठती हुई) भई, मैं जा रही हूँ। यहाँ मीटिंग नहीं होती, बस यही सब होता है।

गुरप्रीत के चरित्र में स्पष्टता भी देखने को मिलती है। वह अपनी बात को स्पष्टतापूर्वक कहने में कोई संकोच नहीं करती है। वह सब कुछ साफ स्पष्ट कहने में विश्वास करती है। उसे कोई लाग–लपेट पसंद नहीं है। एकांकी में जब प्रस्ताव गुम हो जाता है तो सत्यपाल इधर–उधर देखते हुए कहने लगा कि कहीं गुरप्रीत ने बटुए में तो नहीं रख लिया। इस पर गुरप्रीत स्पष्टतापूर्वक उसका विरोध करती है कि "इनका प्रस्ताव मेरे बटुवे में आप क्या कहना चाहते हैं?"

स्पष्ट है कि गुरप्रीत अत्यंत स्पष्ट एवं निडर महिला है। वह पुरूषों की सभा में बैठकर भी उनके व्यंग्यात्मक बाणों को केवल सहन नहीं करती बल्कि उनका निडरतापूर्वक उत्तर भी देती है।

शर्मा का चरित्र :–

'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी का पुरुष पात्र शर्मा है। जिससे एकांकी की शुरूआत होती है। सेक्रेटरी शर्मा 'लो पेड वर्कर्स वेलफेयर सोसाइटी' जैसे कर्मचारी वर्ग की संस्था को केन्द्र में रखकर इस मुद्दे पर बातचीत करता है। स्कूल में बैठक का आयोजन करता है किंतु जब वहाँ पहुँचता है तो कोई भी सदस्य नहीं आया होता। जिस कारण उसका रोष इस प्रकार झलकता है, "...लोग समझते हैं, मेरे बाप के घर का काम है। जैसे मुझे तनख्वाह मिलती है इसकी। कोई एक आदमी वक्त से नहीं आता।... साढ़े पाँच मीटिंग शुरू होनी थी और पौने छह बज चुके हैं।..."

स्पष्ट है कि शर्मा इस मीटिंग को लेकर गंभीर है। थोड़ी देर में जब मनोरमा, संतोष व गुरप्रीत आ जाते हैं तो शर्मा कहता है कि आप लोगों के साढ़े पाँच बज चुके हैं। वक्त की पाबंदी तो सिर्फ मुझे ही है। शर्मा एक ऐसा पात्र है जो इस मीटिंग को लेकर चिंतित था और वह चाहता है हमारे देश से ऐसी समस्याएँ समाप्त हो जाएं। इसीलिए वह बैठक में सबके साथ मिलकर इस मुद्दे पर विचार–विमर्श करना चाहता था। जब सेक्रेटरी द्वारा कार्यवाही का आरंभ होता है। मूल प्रस्ताव के पूर्व अनर्गल बातें, छींटाकशी, एक–दूसरे से नोक–झोक या टिका–टिप्पणी चल रही थी, किसी प्रकार इन बातों पर जब विराम चिन्ह लगता है तो प्रस्ताव पढ़ने की बात आती है। प्रस्ताव ही सेक्रेटरी की फाइल से गायब हो जाता है। प्रस्ताव को कभी पतलून की जेब में, कभी कोट की जेब में, तो कभी गुरप्रीत के बटुवे में देखने की बात कही जाती है। अंततः वह प्रस्ताव इकट्ठे किए गए कूड़े की जगह मिलता है। जैसे ही शर्मा प्रस्ताव को पढ़ने लगता

है, ''हम, लो ग्रेड पेड वर्कर्स वेल्फेयर सोसाइटी के सभी सदस्य...।'' तो वाक्य अभी पूरा भी नहीं हो पाता तब तक संशोधन के रूप में दो आपत्तियाँ इस प्रकार उपस्थित हो जाती हैं–

संतोष : मुझे आपत्ति है, जब प्रस्ताव हिंदी में है तो संस्था का नाम भी हिंदी में होना चाहिए।

दीनदयाल : मुझे भी आपत्ति है। जब सब सदस्य यहाँ उपस्थित नहीं हैं, तो प्रस्ताव में सब सदस्यों का उल्लेख कैसे किया जा सकता है।

इन दोनों संशोधनों का समर्थन भी दो सदस्य कर देते हैं। संतोष के यह कहने पर कि जब संस्था का प्रस्ताव हिंदी में है तब उसका अंग्रेजी में नाम होना राष्ट्र भाषा का अपमान है। इस तरह हिंदी में सही नाम खोजने की शुरूआत हो जाती है। बहुत वाद–विवाद के बाद दोनों संशोधनों को स्वीकार करते हुए प्रस्ताव पढ़ा जाता है। प्रस्ताव पढ़ने के बाद जब तीन स्थानों पर 'निम्नस्तर' शब्द आता है तो पुनः बहस शुरू हो जाती है। जिसका अर्थ जानने के लिए अध्यक्ष द्वारा डिक्शनरी की खोज और संतोष से स्पष्टीकरण मांगा जाता है। बहस को लम्बा खिंचते देखकर पक्ष–विपक्ष में मतदान की स्थिति में बहुत से सदस्य उस बैठक को छोड़कर चले जाते हैं। अंततः अध्यक्ष द्वारा मीटिंग समाप्त कर दी जाती है। स्पष्ट है कि सेक्रेटरी शर्मा इस मीटिंग में अपनी रूचि दिखाते हुए प्रस्ताव को पढ़ता तो है लेकिन बैठक के अन्य सदस्य बार–बार हस्तक्षेप करके इस मीटिंग को सकारात्मक दिशा नहीं दे पाते। शर्मा अपनी निष्ठता व साहस से इस कार्यक्रम को चलाता तो है लेकिन अन्य सदस्य के असहयोग से पूर्ण नहीं कर पाता।

राम भरोसे और श्याम भरोसे का चरित्र :–

इस एकांकी में राम भरोसे और श्याम भरोसे दो ऐसे निम्नवर्गीय पात्र हैं जो स्कूल के कमरे की साफ–सफाई करते हैं। रोजमर्रा के कामों से ऊबे हुए राम भरोसे और श्याम भरोसे को कुर्सी–मेज़ और डेस्क से धूल झाड़ते हुए दिखाया गया हैं। राम भरोसे और श्याम भरोसे दोनों ऐसी मीटिंग से भलिभांति परिचित हैं। तंग आकर रामभरोसे डेस्कों से धूल झाड़ता है तो श्याम भरोसे शिकायत करता है कि ''इतनी धूल क्यों उड़ाता है? आहिस्ता से नहीं झाड़ा जाता?'' इसके प्रत्युत्तर में राम भरोसे कहता है, ''ससुर रोज़–रोज़ मीटिंग होगी तो किसकी जान रहेगी? आज एक का जनम–दिवस होकर निकलता है तो कल दूसरे का मरन–दिवस आ जाता है। जनमें–मरें ये, धूल खाये राम भरोसे, श्याम भरोसे। (जोर से झाड़ता हुआ) सबेरे निकालो, तो शाम को चली आती है। शाम को निकाली, तो सबेरा नहीं होने देती।''

श्याम भरोसे : आज भी किसी का जनम–दिवस है क्या?

राम भरोसे : पता नहीं, कौन दिवस है? अपना तो मरन–दिवस है।

दोनों के वार्तालाप से बैठक की निरर्थकता का पूर्वाभास हो जाता है। दोनों पात्रों की शुरूआत एकांकी के आरम्भ में होती है। कथा के आगे बढ़ने पर दोनों पात्र विलुप्त हो जाते हैं और बैठक की समाप्ति पर दोनों पात्रों के द्वारा एकांकी का अंतिम दृश्य दिखाया जाता है। बैठक के बाद श्याम भरोसे द्वारा पूछे जाने पर कि बाबू लोग क्या पास कर

गए तो राम भरोसे कहता है, ''पास कर गए कि राम भरोसे, राम भरोसे के घर में और बाबू लोग अपने अपने घर में रहेंगे।'' यह कथन बैठक की निरर्थकता को पूरी तरह उद्घाटित करता है।

शेष पात्रों में प्रेम प्रकाश, दीनदयाल, रमेश, मोहन, सत्यपाल, कपूर, मनोरमा, सभी एकांकी की कथा को आगे बढ़ाते हैं।

8.4 निष्कर्ष

प्रस्तुत एकांकी के सभी पात्र अपनी–अपनी भूमिका अदा करते हैं। राम भरोसे और श्याम भरोसे को छोड़कर अन्य पात्र एक–दूसरे को अपना विरोधी मानते हैं, वे अपने–अपने हितों को ही महत्व देते हैं जिस कारण उस बैठक का रूप सार्थक नहीं हो पाता। परस्पर ईर्ष्या–द्वेष के चलते एक–दूसरे पर क्रिया–प्रतिक्रिया करते दिखाई देते हैं। इसे ही एकांकीकार ने अपना विषय बनाया है।

8.5 कठिन शब्द

विरोधी

प्रतिक्रिया

निरर्थकता

हस्तक्षेप

पतलून

निम्नस्तर

8.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) गुरप्रीत के चरित्र पर प्रकाश डालें।

____

____

प्र2) शर्मा के चरित्र का परिचय दीजिए।

____

____

प्र3) राम भरोसे और श्याम भरोसे का चरित्र इस एकांकी में किस तरह का रहा है?

8.7 पठनीय पुस्तकें

1. बहुत बड़ा सवाल– मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटक– बच्चन सिंह
3. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– नेमिचन्द्र जैन
4. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल
5. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक : मोहन राकेश के संदर्भ में– डॉ. रीता कुमार
6. रंगदर्शन– डॉ. नेमिचन्द्र जैन
7. हिन्दी नाटक उद्‌भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा

****

B.A. HINDI **Lesson No. 09**

COURSE CODE: HI-601 **B.A. Sem-6th**

'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी की रंगमंचीयता

9.0 रूपरेखा

9.1 उद्देश्य

9.2 प्रस्तावना

9.3 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी की रंगमंचीयता

9.4 निष्कर्ष

9.5 कठिन शब्द

9.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.7 पठनीय पुस्तकें

9.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन उपरान्त आप 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी की कथावस्तु से परिचित होने के साथ साथ एकांकी की रंगमंचीयता तथा संवाद योजना को भी जान सकेंगे।

9.2 प्रस्तावना

मोहन राकेश की एकांकी में निम्नवेतन भोगी कर्मचारियों की संस्था को रेखांकित किया है। जिसमें यह बताया गया है कि जिन मुद्दों पर विचार–विमर्श होना चाहिए उस पर ध्यान न देते हुए दूसरे विषयों पर ही बातचीत अधिक होती है। अपनी समस्याओं को सुलझाने के बजाए आपसी नोक–झोक, पारस्परिक ईर्ष्या–द्वेष आदि निरर्थक बातों पर विचार करते हैं। इसी दृश्य को लेखक ने 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी में रेखांकित करना चाहा है।

9.3 कथावस्तु

इस एकांकी में कथा और घटनाओं का नितांत अभाव है। इसमें लो ग्रेड वर्कर्स वेलफेयर सोसाइटी की एक बैठक को विषय बनाया गया है। बैठक की व्यवस्था स्कूल के एक छोटे से कमरे में की गयी है, जिसमें ब्लैक बोर्ड को हटाकर कोने में रख दिया गया है। इसमें अध्यक्ष के लिए मास्टर की मेज और सदस्यों के लिए बच्चों के डेक्स की व्यवस्था है। पर्दा उठने के बाद रोजमर्रा के कामों से ऊबे हुए राम भरोसे और श्याम भरोसे कुर्सी–मेज़ और डेस्क से धूल झाड़ते हुए दिखाई दिये गए हैं। श्याम भरोसे जब कहता है कि इतना धूल क्यों उड़ा रहा है तब राम भरोसे कहता है–

> राम भरोसे : ससुर रोज़–रोज़ मीटिंग होगी तो किसकी जान रहेगी? आज एक का जनम–दिवस होकर निकलता है तो कल दूसरे का मरन–दिवस आ जाता है। जनमें–मरें ये, धूल खाये राम भरोसे, श्याम भरोसे। (जोर से झाड़ता हुआ) सबेरे निकालो, तो शाम को चली आती है। शाम को निकालो, तो सबेरा नहीं होने देती।
>
> श्याम भरोसे : आज भी किसी का जनम–दिवस है क्या?
>
> राम भरोसे : पता नहीं, कौन दिवस है? अपना तो मरन–दिवस है।

दोनों के वार्तालाप से स्पष्ट है कि वे रोज़–रोज़ की इस बैठक को देखकर तंग पढ़ चुके थे। अतः बैठक की निरर्थकता का पूर्वाभास माना जा सकता है। इस बैठक में सबसे पहले शर्मा समय पर पहुँचता है। वहाँ पर किसी को न देखकर उसे गुस्सा आता है और वह कहता है कि लोग समझते हैं, मेरे बाप के घर का काम है। कोई भी सदस्य समय पर नहीं आता। कुछ सदस्य जब थोड़ी देर के बाद पहुँचते हैं तो बैठक के बारे में कोई बात न होकर आपस में नोंक–झोंक, एक–दूसरे पर छींटाकशी, अनुपस्थित अध्यक्ष के चरित्र पर लांछन आदि को लेकर बहस चलती है। बैठक के सदस्य इन्हीं निरर्थक बातों में उलझे रहते हैं।

संगठन के अध्यक्ष की अनुपस्थिति में एक साधारण सदस्य कपूर को अध्यक्ष बनाकर बैठक आरंभ करने का प्रयास किया जाता है लेकिन भाइयों और बहनों के संबोधन करने पर आपत्ति की जाती है। जिस पर सभी सदस्यों की बहस चल पड़ती है। मोहन का मानना है कि पहले बहन और फिर भाइयो आना चाहिए। उसी तरह रमेश कहता है कि सभ्य समाज में हमेशा लेडीज एंड जेंटलमेन कहा जाता है, जेंटलमेन एंड लेडीज नहीं। इसी तरह इस शब्द का संशोधन करने में सभी अपने विचार रखते हैं अंततः 'लेडीज़ एंड जेंटलमेन' की तर्ज पर 'बहिनों और भाइयो' को सही संबोधन स्वीकार कर लेने पर भी कार्यवाही चल नहीं पाती। स्पष्ट है कि संबोधन पर इस तरह की आपत्ति और उसके पक्ष–विपक्ष का समर्थन संगठन के सदस्यों की अंगभीरता का परिचायक है।

इतनी बहस के पश्चात् जब सेक्रेटरी द्वारा कार्यवाही का आरंभ होता है तो मूल प्रस्ताव के पूर्व भूमिका के रूप में लम्बे, उबाऊ और अनर्गल भाषण पर बीच में रोक–टोक, टीका–टिप्पणी होती रहती है। किसी तरह यह उबाऊ बातें खत्म होती हैं और पारित होने के लिए प्रस्ताव पढ़ने की बात आती है, तो प्रस्ताव ही सेक्रेटरी शर्मा की फाइल से गायब

हो जाता है। कोई कहता है शर्मा पतलून की जेब में देखो, कभी कोट की जेब में यहाँ तक कि गुरप्रीत के बटुबे में होने की बात कही जाती है। सेक्रेटरी शर्मा फिर से नया ड्राफ्ट (प्रस्ताव) लिखने लगता है तो अचानक उन्हें ड्राफ्ट सफाई के बाद इकट्ठा किए गए कूड़े से मिलता है। प्रस्ताव के प्रारूप का पहला, किंतु अधूरा वाक्य है, ''हम लो ग्रेड वर्कर्स वेल्फेयर सोसाइटी के सभी सदस्य...।'' वाक्य अभी पूरा ही नहीं होता तो तब तक संशोधन के रूप में दो आपत्तियाँ इस प्रकार उपस्थित की जाती हैं:

संतोष : मुझे आपत्ति है। जब प्रस्ताव हिंदी में है तो संस्था का नाम भी हिंदी में होना चाहिए।

दीनदयाल : मुझे भी आपत्ति है। जब सब सदस्य यहाँ, तो प्रस्ताव में सब सदस्यों का उल्लेख कैसे किया जा सकता है।

इतना ही नहीं संतोष कहता है कि जब संस्था का प्रस्ताव हिंदी में है तब उसका अंग्रेजी में नाम होना राष्ट्र भाषा का अपमान है, तो हिंदी में सही नाम की खोज शुरू हो जाती है। वाद–विवाद के बाद दोनों संशोधन को स्वीकार करते हुए प्रस्ताव पढ़ा जाता है। प्रस्ताव में आया शब्द 'निम्नस्तर' को लेकर सभी सदस्यों में लम्बी बहस छिड़ जाती है। जिसका अर्थ जानने के लिए अध्यक्ष द्वारा डिक्शनरी की खोज ओर संतोष से स्पष्टीकरण की मांग की जाती है। बहस को लम्बा खिंचते देख और पक्ष–विपक्ष में मतदान की स्थिति में बहुत से सदस्य खिसक जाते हैं। अंततः कोरम के अभाव में अध्यक्ष द्वारा मिटिंग खत्म कर दी जाती है। बैठक के समाप्त होने के बाद श्याम भरोसे द्वारा यह पूछे जाने पर कि बाबू लोग क्या पास कर गए तो राम भरोसे कहता है, ''पास कर गए कि राम भरोसे, राम भरोसे के घर में और बाबू लोग अपने अपने घर में रहेंगे।'' यह कथन बैठक की निरर्थकता को पूरी तरह उद्घाटित करता है।

पात्र–चित्रण :– एकांकी हो या कहानी, लेकिन जब तक पात्रों के चरित्र को न उबारा जाए तब तक कथा आगे नहीं बढ़ पाती। पात्रों के बिना कोई भी कथा बुनी नहीं जा सकती। पात्र ही रंगमंच की शोभा को बढ़ाते हैं। पात्रों का चरित्र–चित्रण कहानी की भाँति ही एकांकी का भी एक महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है। एकांकी में राम भरोसे और श्याम भरोसे एक ऐसे निम्नवर्गीय पात्र हैं जो कमरे की साफ–सफाई के बाद दरवाजे के बाहर रहते हैं ताकि किसी भी सदस्य को अगर उनकी जरूरत है तो वह जल्द ही हाजिर हो सकें। ये दोनों पात्र आरंभ में उपस्थित होकर एकांकी की शुरूआत करते हैं और अंत भी इन्हीं दोनों की बातचीत से होता है। यह जीवन के यथार्थ से परिचित हैं।

एकांकी का दूसरा पात्र शर्मा है जो मंच पर पहुंचते ही अपनी अहंवादी मानसिकता का परिचय देता है। शर्मा का स्वभाव राम और श्याम भरोसे के प्रति कटुता भरा रहता है यही स्थिति मनोरमा और संतोष की भी है जो मंच पर पहुंचते ही अपने छिछलेपन तथा अवसरवादी प्रवृत्ति का परिचय देते हैं।

इस एकांकी में गुरप्रीत ही एक ऐसी पात्र है जो इस बैठक का हिस्सा तो बन जाती है लेकिन फालतू की बातों में बार–बार आपत्ति जताती है। गुरप्रीत अंत तक अपनी शालीनता का परिचय देती है। वह एक ओर मीटिंग के लिए चिंतित दिखाई देती है तो दूसरी ओर अन्य सदस्यों द्वारा की जा रही निंदा और दूसरों पर कटाक्ष के प्रति अपना असंतोष

व्यक्त करती है। बार–बार उसका प्लीज कहना, 'दिस इज टूमच' कहना उसके विरोध को प्रकट करता है। अनुपस्थित अध्यक्ष के चरित्र पर लग रहे लांछन से तंग होकर ही उसने दो वाक्य बोले हैं, "मैं इसीलिए आप लोगों की मीटिंग में नहीं आना चाहती थी। यहाँ काम तो कुछ होता नहीं, बस इसी तरह की बातें होती हैं।" इस प्रकार की बातों से तंग आकर वह शर्मा से पूछती है कि मीटिंग कब शुरू होगी। मुझे तो मीटिंग होने के कोई असार नहीं दिखते । वह मीटिंग की असफलता देखकर सबसे पहले वहाँ से चली जाती है।

अध्यक्ष की अनुपस्थिति में मीटिंग की अध्यक्षता करने वाला कपूर भी अपनी नियत का पूरा परिचय रंगमंच पर उपस्थित कर देता है। औरों को अपनी हंसी–मज़ाक का विषय बनाना उनके चरित्र को दर्शाता है। अपने वाह–वाह का आशय बताते हुए उसने कहा मैं तो इस पर वाह–वाह कर रहा था कि शर्मा तीन–तीन लेडीज़ से घिरा हुआ है। सैक्रेटरी होने के कितने फायदें और मजे हैं। मनोरमा और गुरप्रीत के प्रति अपने रुख और अनुपस्थित अध्यक्ष की निंदा द्वारा अपने चरित्र को वह पूरी तरह प्रकट कर देता है। एकांकी के शेष पात्रों में प्रेमप्रकाश, दीनदयाल, रमेश, मोहन, सत्यपाल आदि सभी एक विशेष निम्न मध्यवर्गीय प्रवृत्ति से संचालित हैं।

परिवेश व वातावरण :–

जिस तरह कहानी में देशकाल व वातावरण का अधिक महत्व रहता है उसी तरह एकांकी में भी विषय अनरूप वातावरण व परिवेश का चित्रण किया जाता है। वेशभूषा, साज–सज्जा, रीति–रिवाज़, रहन–सहन, ध्वनि, छाया, प्रकाश, मंच, सज्जा और पात्रों की मनोदशा का विशेष ध्यान रखा जाता है। इस एकांकी में भारतीय समाज और राजनीति के सातवें दशक विशेषकर इंदिरा सरकार के बनने के बाद के वातावरण व परिवेश को दर्शाया है। जिसका स्पष्ट उल्लेख सत्यपाल नामक पात्र द्वारा एकांकी में हुआ है, "शर्मा साहब, सीधे उस बात पर आ जाइए... जब से इंदिरा सरकार बनी है, तब से...।" कहने का तात्पर्य यह है कि स्वाधीनता से पूर्व जागरुकता व प्रगतिशीलता की भावना थी और स्वाधीनता के बाद धीरे–धीरे गिरावट आने लगी क्योंकि सभी अपने ढंग से संगठनों को चलाने लगे। एक आपैचारिकता की पूर्ति के लिए बहुत से सीमित क्षेत्र में कल्याणकारी संगठनों का निर्माण हुआ लेकिन वहाँ सामूहिक एकता देखने को नहीं मिलती। मिलती है तो केवल एक दूसरे के प्रति कटु आलोचना। इसी कारण यह संगठन प्रायः निर्जीव बन जाते हैं। 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी के अधिकांश पात्र अलग–थलग, आत्मबद्ध, एक–दूसरे के प्रति ईष्या से ओत–प्रोत होकर कर्मचारी संगठन जैसी सार्थक संस्था को हास्यास्पद बना देते हैं। इस तरह बैठकों को अपनी भड़ास निकालने का एक माध्यम बनाते हैं। जिस कारण वहां के परिवेश में कौतूहल मच जाता है और सारा दृश्य उदासीनता में परिवर्तित हो जाता है।

संवाद योजना :–

संवाद–योजना एकांकी का प्राण है। इस एकांकी में मोहन राकेश ने पात्रों के द्वारा संवादों को बड़ी ही सहजता से दिखाया है कि किस तरह पात्र संवादों द्वारा कथा को आगे बढ़ाते जाते हैं। नाटक या एकांकी के संवाद अत्यंत चुस्त–दुरुस्त और छोटे होने चाहिए। जिससे पात्रों की मनोदशा भी अच्छी तरह व्यक्त हो सके। इसके साथ ही रंगशाला

(थिएटर) में उपस्थित दर्शकों पर भी उनका पूरा प्रभाव पड़ना चाहिए। उन्हें यह नहीं लगना चाहिए कि वह नाटक देख रहे हैं। सबसे अधिक महत्वपूर्ण यह है कि दर्शक को एक सच्ची अनुभूति होनी चाहिए। यह महत्वपूर्ण कार्य संवादों के माध्यम से ही पूरा हो सकता है। इस कौशल का परिचय लेखक ने एकांकी के आरंभ में इस प्रकार किया है–

''परदा उठने पर राम भरोसे और श्याम भरोसे डेस्कों से धूल झाड़ रहे हैं।''

श्याम भरोसे : (हाथ रोककर) राम भरोसे!
राम भरोसे बिना सुने धूल झाड़ता रहता है।

: ए राम भरोसे!

राम भरोस : (बिना हाथ रोके) क्या है?

श्याम भरोसे : इतनी धूल क्यों झाड़ता है? आहिस्ता से नहीं झाड़ा जाता? रोज़–रोज़ की धूल से फेफड़े पहले ही खाए हुए हैं।

राम भरोसे : तो रोता क्यों है? जान पाँच बरस में नहीं जाएगी, चार बरस में चली जाएगी।

इन संवादों की सहजता दर्शक को पूरी तरह अपनी ओर आकृष्ट करने में सक्षम है। यह अशिक्षित कर्मचारियों की आपसी बातचीत है। मीटिंग में भाग लेने वाले शिक्षित पात्रों के संवाद उनके चरित्र को भी दर्शकों के सामने उद्घाटित कर देते हैं जिसका स्पष्ट उदाहरण इस प्रकार मिलता है– राम भरोसे और श्याम भरोसे दोनों दायीं तरफ के दरवाज़े के बाहर बैठे हैं। राम भरोसे हाथ पर सुरती मलने लगता है। श्याम भरोसे ऊँघने की मुद्रा में टेक लगा लेता है। मनोरमा, संतोष और गुरप्रीत उसी दरवाजे से अंदर आते हैं। राम भरोसे आँखें उठाकर चिढ़ते हुए भाव से उन्हें आते देखता है।

मनोरमा : क्या बात है, शर्मा? पहरा क्यों बिठा रखा है बाहर? मीटिंग में मारधाड़ तो नहीं होने वाली है?

शर्मा : (उठता हुआ) साढ़े पाँच बज गए आप लोगों के

मनोरमा : अभी कोई भी तो नहीं आया, सिवाय हमारे

शर्मा : साढ़े छह तक आराम से आएँगे लोग। वक्त की पाबंदी तो सिर्फ एक आदमी पर है। क्योंकि वह कमबख्त सैक्रेटरी है।

संतोष : मैंने इसीलिए अपना नाम वापस ले लिया था। मुफ्त की सिरदर्दी।

मनोरमा : तूने इसीलिए नाम वापस ले लिया था कि शर्मा के खिलाफ तुझे तीन वोट भी नहीं मिलते! अवर शर्मा इज ग्रेट।

संतोष : लांग लिव शर्मा

मनोरमा : (गुरप्रीत से) तू इतनी गुप–चुप क्यों है।

संतोष : शर्मा के सामने यह हमेशा गुप–चुप हो जाती है।

गुरप्रीत : प्लीज!

मंच पर उपस्थित होते ही यहाँ चारों पात्रों की नीयत और उनके चरित्र का पूर्वाभास दर्शक को ही जाता है, जो उसके विषय में अंत तक बरकरार रहा है।

उपर्युक्त विवेचन–विश्लेषण के बाद हम कह सकते हैं कि 'बहुत बड़ा सवाल' शीर्षक एकांकी अपने संवाद–कौशल के कारण अत्यंत महत्वपूर्ण है।

भाषा शैली :–

किसी भी कहानी, नाटक या एकांकी की भाषा सरल, स्पष्ट, प्रवाहपूर्ण, चुस्त और सशक्त होनी चाहिए। भाषा जितनी सरल व स्पष्ट होगी पाठक व दर्शक उसे उतनी ही आसानी से समझ पाएगा। 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी में अंग्रेजी शब्द का प्रयोग अधिक हुआ है– चेयरमैन, सेक्रेटरी, थैंक्स, मीटिंग, सॉरी, ग्रेट, लेट–लेट, लो ग्रेड, कैंसिल, कैंटीन, प्लीज, टेस्ट, न्यूट्रल, पर्सनल, लेडीज फ्रान्ट, जेन्ट्स बैक, एजेंडा, रेजोल्यूशन, ड्राफ्ट, कोट, ड्राईक्लीन आदि। इसी के साथ अरबी व फारसी शब्द का भी प्रयोग हुआ है। अरबी शब्द कुरसी और फारसी शब्द चाय।

उद्देश्य :– इस एकांकी में मोहन राकेश ने लो पेड वर्कर्स वेलफेयर सोसाइटी जैसे कर्मचारी वर्ग की मनोदशा को दर्शाया है जो अपना संगठन तैयार तो करते हैं पर उसमें एकता का अभाव ही देखने को मिलता है।

9.4 निष्कर्ष

अतः कहा जा सकता है कि इस एकांकी में निम्नवेतन भोगी कर्मचारियों की संस्था को केन्द्र में रखकर बात की गई है लेकिन इस एकांकी के पात्रों में एक–दूसरे को नीचा या हीन दिखाने की प्रवृत्ति है।

9.5 कठिन शब्द

1. संख्या
2. पूर्वाभास
3. न्यूट्रल
4. रेजोल्यूशन
5. आकृष्ट

9.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) 'बहुत बड़ा सवाल' एकांकी की कथावस्तु पर प्रकाश डालें।

प्र2) बहुत बड़ा सवाल एकांकी की संवाद योजना को स्पष्ट करें।

प्र3) हिंदी के प्रस्ताव में संस्था का नाम अंग्रेजी में हो, यह राष्ट्रभाषा का अपमान है। आप इनसे कहिए,पहले नाम हिंदी में कर दें। इसकी सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

प्र4) प्रस्ताव में तीन जगह एक शब्द आया है– निम्नस्तर। इसका अर्थ है, चूँकि आज हम निम्नस्तर के कर्मचारी हैं। हमारे लिए आवास–व्यवस्था हो, तो कैसी? निम्नस्तर की। हमारे बनाये जायें, तो कैसे? निम्नस्तर के, इसके बाद शायद हम लोग यह माँग करें कि हमारे निम्नस्तर बच्चों के लिए निम्नस्तर बाल–संरक्षण व्यवस्था के अंतर्गत निम्नस्तर पालन की एक योजना बनायी जाये जिससे हर ऐसे बच्चे को, जिसकी उम्र पाँच साल से अधिक की है, कम–से–कम आधा पाव दूध उपलब्ध हो सके। इसकी सप्रसंग व्याख्या करें।

9.7 पठनीय पुस्तकें

1. बहुत बड़ा सवाल– मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटक– बच्चन सिंह
3. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– नेमिचन्द्र जैन
4. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल
5. स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी नाटक : मोहन राकेश के संदर्भ में– डॉ. रीता कुमार
6. रंगदर्शन– डॉ. नेमिचन्द्र जैन
7. हिन्दी नाटक उद्‌भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा

*****

B.A. HINDI	**Lesson No. 10**
COURSE CODE: HI-601	**B.A. Sem-6th**

'अण्डे के छिलके' की समीक्षा

10.0 रूपरेखा

10.1 उद्देश्य

10.2 प्रस्तावना

10.3 'अण्डे के छिलके' की समीक्षा

10.4 निष्कर्ष

10.5 कठिन शब्द

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.7 पठनीय पुस्तकें

10.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन उपरान्त आप पुरानी व नयी पीढ़ी की मानसिकता को जान सकेंगे। परिवार की एकता एवं आत्मीयता को कैसे बनाये रखा जाता है इससे भी रू–ब–रू हो सकेंगे।

10.2 प्रस्तावना

'अण्डे के छिलके' एकांकी में एक सकारात्मक दृष्टिकोण देखने को मिलता है। नई व पुरानी पीढ़ी के बीच में अन्तराल होने के बावजूद भी किसी प्रकार का कोई आक्रोश व टकराव नहीं है बल्कि एक–दूसरे की इच्छाओं का ध्यान रखते हुए बड़ी ही सहनशीलता व संयम के साथ स्थिति को संभालते हैं।

10.3 'अण्डे के छिलके' की समीक्षा

एकांकी एक ही अंक में घटित रचना होती है, इसलिए इसकी कथावस्तु का अत्यंत सुगठित होना आवश्यक है। 'अण्डे के छिलके' एकांकी संग्रह मोहन राकेश की मृत्यु के पश्चात प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत एकांकी का शीर्षक लेखक व नाटककार ने सोच–समझकर रखा है क्योंकि सम्पूर्ण एकांकी में अंडे का विषय उपस्थिति रहा है। जैसे अण्डे का हलवा बनाना, अण्डे के छिलकों को छिपाकर रखना, कभी जूते के मौजों में तो कभी किसी कोने में, छिपाने के लिए तरह–तरह के प्रयत्न किये जाते हैं। कुल मिलाकर अंडे का विषय इस एकांकी में बड़ी ही रोचक तथा नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया गया है जिसके कारण एकांकी का शीर्षक 'अण्डे के छिलके' सार्थक सिद्ध होता है।

प्रस्तुत एकांकी में मोहन राकेश ने यह बताया है कि जहां एक तरफ पुरानी पीढ़ी के लोग अब भी अपनी परंपरा और बंधनों से जुड़े हुए हैं वहीं नई पीढ़ी के लोग उन बंधनों में बंधकर नहीं रहना चाहते। वह अपने मन की करना चाहते हैं। वह घुटन भरी ज़िन्दगी नहीं जीना चाहते। पारिवारिक वातावरण से युक्त यह एक हास्यपरक एकांकी है। मोहन राकेश ने जिस प्रकार अपने नाटकों में नारी के स्वरूप पर विस्तृत रूप से लेखनी चलायी है उसी प्रकार एकांकियों में भी नारी के रूप को देखने का प्रयास किया गया है। इन्होंने एकांकियों की रचना कम की है किन्तु जितनी भी लिखी है उसमें स्पष्टता व रोचकता देखने को मिलती है।

मोहन राकेश की एकांकी 'अण्डे के छिलके' एक परिवार की कथा है, जिसमें परिवार की एक सदस्य वीना है जो प्राचीन परम्पराओं व बंधनों का अंधा अनुकरण नहीं करना चाहती। उसमें किसी तरह का कोई छिपाव नहीं है। वह प्रत्येक बात को खुलकर कहती है। वह निस्संकोच व निर्भीक होने के साथ–साथ स्पष्टवादिनी भी है। इसका स्पष्ट उदाहरण वीना के कथन द्वारा मिलता है जब वह श्याम से कहती है, "यहाँ रोज़ सुबह अंडे का नाश्ता होता है, तुम्हारे भाई साहब ने यह बिजली का स्टोव किसलिए लाकर रखा है।"

अपनी भाभी के मुख से यह बात सुनकर वह उन्हें संयम रखने को कहता है। श्याम कहता है कि अगर अम्मा ने सुन लिया तो सारे घर का गंगा स्नान हो जायेगा। तब वीना कहती है "...अगर खाना ही है तो उसमें छिपाने की क्या बात है? सबके सामने खाओ। माँ जी नहीं खाती, इसलिए रसोईघर की बजाय यहाँ कमरे में बना लेते हैं।"

स्पष्ट है कि वीना के मन में किसी तरह का कोई डर नहीं है। उसके कथन इन सभी विशेषताओं को स्पष्ट करते हैं कि वह पुरानी परम्पराओं को स्वीकारने के लिए कतई तैयार नहीं है।

प्रस्तुत एकांकी की दूसरी नारी पात्र राधा है। वह पुराने विचारों की नारी है किन्तु उसे किताबें पढ़ने का बहुत शौक है। वह गीता, रामायण और महाभारत पढ़ती है लेकिन समय के अनुसार वह भी अपने अंदर की महत्वाकाक्षाओं को पूरा करना चाहती है। यही कारण है कि चंद्रकांता, भूतनाथ, चंद्रकांता सन्तति उपन्यास को रात के समय मोमबत्ती जलाकर पढ़ती है ताकि किसी को पता न चले। राधा का रहस्य वीना से अधिक देर तक छिप नहीं पाता और वीना

अपनी भाभी राधा से कहती है कि इसमें घबराने की क्या बात है? इसमें तो ऐसा कुछ नहीं है जो पुस्तक छिपाकर दरवाज़ा बंद करके पढ़ना पड़े।

राधा अपनी समझदारी दिखाते हुए कहती है, "हम माँ जी के सामने ऐसी चीज़ कभी नहीं पढ़ सकते। कोई खराब बात चाहे न हो मगर माँ जी देखेंगी तो क्या सोचेंगी कि रामायण नहीं, महाभारत नहीं, दिनभर बैठकर ऐसे किस्से ही पढ़ा करती है।"

राधा परिवार की मान–सम्मान व परम्पराओं से जुड़े सदस्यों को ठेस नहीं पहुँचाना चहती है। इसीलिए वह पुराने संस्कारों व नये परिवर्तनों, दोनों को अपनाकर चलती है। वहीं दूसरी ओर श्याम का छुपकर अण्डे खाना, गोपाल का सिगरेट पीना, माधव का भी स्वेच्छा से जीना ये सब इनकी इच्छाओं को दर्शाता है। परिवार में एक तरफ पुराने संस्कारों की प्रबलता है तो दूसरी तरफ होने वाले नए परिवर्तनों का प्रभाव। दोनों में संघर्ष है। इन्हीं स्थितियों के द्वारा लेखक ने आडम्बर के प्रति अपनी वितृष्णा व्यक्त की है। वीणा एक आडम्बरहीन नवयुवती है इसीलिए वह दुहरेपन को स्वीकार नहीं कर पाती। राधा, श्याम और गोपाल तीनों एक–दूसरे की रक्षा करते हैं। यहां तक कि बड़ा भाई माधव सब कुछ जानने के बाद भी कुछ नहीं कहता है। इस एकांकी में नया मोड़ तब आता है जब पता चलता है कि अण्डे का रहस्य जिस अम्मा (जमुना) से छुपाया जा रहा था वह सब जानती है। जब माधव कहते हैं कि अम्मा भी सारी बातें जानती है लेकिन जानबूझकर अनजान बने रहने में ही अपने प्राचीन जीवन मूल्यों को सुरक्षित रखने में कुशलता समझती है। इसीलिए अण्डे के छिलके नाली में डाले भी जायें तो भी वे उन्हें वहाँ नहीं देखेंगी, क्योंकि वे देखना नहीं चाहती।

अम्मा पुरानी पीढ़ी की होते हुए तथा सभी सदस्यों के रहस्य को जानते हुए भी अपने बच्चों को कुछ नहीं कहती है और न ही किसी पर क्रोध करती है।

इस एकांकी में नये और पुराने की सोच के बीच अंतर तो है किन्तु कटुता नहीं है। समस्या को बड़े ही स्नेह व सद्भाव के साथ विश्लेषित किया गया है। पुरानी और नई पीढ़ी के बीच किसी तरह का कोई टकराव नहीं दिखता। दोनों में सहनशीलता है। यह एकांकी हलके–फुलके वातावरण का निर्माण करती है। नई और पुरानी पीढ़ी के बीच किस प्रकार का सामंजस्य स्थापित करना चाहिए यह प्रेरणा भी इस एकांकी द्वारा मिलती है।

अतः यह भी कहा जा सकता है कि लेखक की भाषा शैली नितान्त सहज और आत्मीय है। मोजे में छिलके रखना, फ्राइंग पेन को बलाउज से ढँक देना, धर्म ग्रन्थ में जासूसी उपन्यास छुपाना जैसे दृश्य एकांकी को मनोरंजक बना देते हैं। लेखक ने इस एकांकी के माध्यम से पारिवारिक एकता को दर्शाया है कि परिवार को किस तरह एक जुट रखना चाहिए। किसी भी सदस्य का मन दुखी न हो इसके लिए चाहे झूठ का ही सहारा क्यों न लेना पड़े तभी एक–दूसरे के प्रति परस्पर प्रेम बना रहता है।

10.5 कठिन शब्द

1. परस्पर
2. सहनशीलता
3. हलके–फुलके
4. प्रबलता
5. सामंजस्य
6. वितृष्णा

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) 'अण्डे के छिलके' एकांकी की समीक्षा करें।

प्र2) 'अण्डे के छिलके' एकांकी का शीर्षक स्पष्ट करें।

प्र3) अण्डे के छिलके एकांकी में राधा और वीना की मानसिकता पर प्रकाश डालें।

प्र4) अम्माँ तो शायद मेरी वे बातें भी जानती हैं जो मैं समझता हूँ कि वे नहीं जानती। (हँसकर) आज से छिलके नाली में डाल दिया करो, इनके लिए डिब्बा रखने की जरूरत नहीं। ... और जहाँ तक अम्माँ का सवाल है। अम्माँ इन्हें नाली में पड़े हुए भी नहीं देखेंगी। इसकी सप्रसंग व्याख्या करें।

10.7 पठनीय पुस्तकें

1. अण्डे के छिलके– मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटक– बच्चन सिंह
3. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– नेमिचन्द्र जैन
4. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल
5. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक : मोहन राकेश के संदर्भ में– डॉ. रीता कुमार
6. रंगदर्शन– डॉ. नेमिचन्द्र जैन
7. हिन्दी नाटक उद्भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा

*****

'अण्डे के छिलके' के पात्रों का चरित्र–चित्रण

11.0 रूपरेखा

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 'अण्डे के छिलके' के पात्रों का चरित्र–चित्रण

11.4 निष्कर्ष

11.5 कठिन शब्द

11.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.7 पठनीय पुस्तकें

11.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन उपरान्त विद्यार्थी अण्डे के छिलके एकांकी के पात्रों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। पात्रों के माध्यम से परिवार में एकता व आत्मीयता को बनाए रखने के लिए सदस्य एक–दूसरे की भावनाओं का सम्मान कैसे करते हैं उससे भी अवगत होंगे।

11.2 प्रस्तावना

मोहन राकेश ने इस एकांकी में एक संयुक्त परिवार की विभिन्न रूचियों को सूक्ष्मता से उभारा है। परिवार में अम्मा, माधव, राधा, वीना, गोपाल और श्याम ये पात्र एक–दूसरे से छिपकर अपनी इच्छाओं व शौक को पूरा कर रहे हैं लेकिन एक–दूसरे की भावनाओं को भी समझते हैं।

11.3 'अण्डे के छिलके' के पात्रों का चरित्र–चित्रण

राधा :– एकांकी 'अण्डे के छिलके' में राधा एक विशेष पात्र है। राधा माधव की पत्नी है। वह घर की बड़ी बहू है। वह एक कुशल गृहिणी होने के साथ–साथ घर–परिवार को अच्छी तरह संभालती है। घर के माहौल को बिगड़ने नहीं देती। दूसरों की गलतियों को अपनी बुद्धिमता से छिपा लेती है ताकि कोई अपमानित न हो सके।

राधा पढने–लिखने की बहुत शौकीन है। वह साहित्य प्रेमी है। उसे साहित्य से बेहद लगाव है। जिसके चलते उसमें सही व गलत का मंथन व विश्लेषण करने की क्षमता देखने को मिलती है। वह पौराणिक कथा से लेकर तिलिस्म कथा तक के पात्रों का भी मंथन करती है। राधा में स्त्री–सुलभ जिज्ञासा की भावना है। उसे चंद्रकांता, चंद्रकांता संतति और भूतनाथ जैसी किताबें पढ़ने का बहुत शौक है। इसीलिए वह परिवार से छुपकर पढ़ती है ताकि किसी को भनक न लगे। इस बात की पुष्टि हमें उसी के शब्दों द्वारा मिलती है, ''... हम माँ जी के सामने ऐसी चीज़ कभी नहीं पढ़ सकते।... माँ जी देखेंगी तो क्या सोचेंगी कि रामायण नहीं, महाभारत नहीं, दिनभर बैठकर ऐसे किस्से ही पढ़ा करती है।''

राधा का चरित्र उत्तम है। उसमें किसी दूसरे के प्रति कोई ईर्ष्या व द्वेष की भावना नहीं है। उसके मन में सबके प्रति सम्मान की भावना है और वह चाह कर भी किसी को ठेस नहीं पहुँचाती। वह अपने व्यवहार के कारण सबमें प्रिय है। वह छोटे–बड़े सभी की भावनाओं का ध्यान रखती है।

राधा एक बुद्धिमान स्त्री भी है। वह वीना से अधिक पढ़ी–लिखी तो नहीं थी लेकिन वह अपनी बात को बड़ी ही स्पष्टता के साथ व्यक्त करती है जिससे उसकी बौद्धिकता का पता चलता है,

''वीना : ...तुम्हें यह किताब ज़रा बचकाना टेक्ट की मालूम होगी।

राधा : वह बात तो है ही। ..... मगर सच कहें, वीना, तो इसमें भी तो शूरवीरता की ही कहानी है। जिस तरह भगवान राम सीता के लिए वन–वन में मारे–मारे फिरते हैं, उसी तरह कुँअर वीरेंद्र सिंह चंद्रकांता के लिए तिलिस्म के अंदर घूमते–फिरते हैं...।''

राधा परिवार की एकता को बनाए रखने में भी सफल रहती है। राधा एक गम्भीर स्वभाव की महिला है। घर में जो कुछ भी चल रहा है उससे वह अज्ञात नहीं है। राधा धार्मिक विचारों वाली स्त्री है। वह घर के काम से बचे समय में रामायण, महाभारत पढ़ती है उसके पास गुटका रामायण है। उसने अपने धार्मिक विचारों के कारण कभी अंडे नहीं खाये। राधा भलिभांति जानती है कि उसकी सास जमुना को अण्डा पसंद नहीं। वह एक धार्मिक स्त्री है इसीलिए वह अपनी सास से अण्डे का रहस्य छुपाकर रखती है। वीना जब अपने कमरे में श्याम के लिए अंण्डे का हलवा बना रही थी तो अचानक अम्मा आ जाती है। अम्मा के यह पूछने पर कि इस समय कमरे में क्या बनाया जा रहा है उस समय राधा अपनी बुद्धि से काम लेती हुई कहती है कि श्याम के टखने में चोट लगी है इसीलिए वीना से कह कर पुलटिस बनवाई है। राधा की बुद्धिमता से ही अम्मा के सामने सबकी पोल खुलने से बच जाती है। स्पष्ट है कि अंडे की बात

को गुप्त रखकर राधा अपनी समझदारी का परिचय देती है और परिवार की एकता को बनाए रखने के लिए हर सम्भव प्रयास करती है। जिससे उसके चरित्र की गुणवत्ता और बढ़ जाती है।

वीना :– प्रस्तुत एकांकी की दूसरी महिला पात्र वीना है। वीना में आधुनिकता का पुट अधिक है। वह पढ़ी–लिखी स्त्री है। वह हर कार्य सोच–समझ कर करती है। वह ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहती जिसे दूसरों से छिपाना पड़े इसीलिए वह चाहती है कि उसके और गोपाल के अंडे खाने का पता घर के अन्य सदस्यों को भी होना चाहिए। वह अपनी इच्छाओं के अनुसार जीने वाली स्त्री है। वह अपनी पसंद का पूरा ख्याल रखती है। वीना को अंडे बहुत पसंद हैं इसीलिए वह परिवार की इच्छा व अनिच्छा को नहीं देखती है। स्वेच्छा से जीते हुए अपनी जरूरतों का त्याग नहीं करती। जिसका स्पष्ट उदाहरण इन पंक्तियों से मिलता है जब वह अपने देवर श्याम से अण्डे लाने को कहती है तो दोनों का वार्तालाप इस प्रकार झलकता है–

"श्याम : शिव, शिव, शिव : किसी और चीज़ का नाम लो, भाभी। इस घर में अंडे का नाम ले रही हो? जाओ जल्दी से जाकर कुल्ला कर लो। मुँह भ्रष्ट हो गया होगा।

वीना : भई, तुम लोगों की यह बात मेरी समझ में बिल्कुल नहीं आती। अगर खाना ही है तो उसमें छिपाने की क्या बात है, सबके सामने खाओ।"

वीना एक नये विचारों की युवती है। उसे दूध और अंडों में कोई अंतर नहीं लगता है। उसके अनुसार कोई भी कार्य छिपकर नहीं करना चाहिए। जब वह अंडे खाते हैं तो उसका पता सबको होना चाहिए।

वीना को साहित्य में रुचि बचपन से ही है। उसने चंद्रकांता संतति, भूतनाथ जैसी पुस्तकें पढ़ रखी है। वह राधा को भी रामायण, महाभारत के साथ–साथ चंद्रकांता संतति पढ़ने के लिए प्रेरित करती है।

वीना के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि शिक्षित तथा नए विचारों की युवती होने के बावजूद अम्मा की भावना को ठेस न लगे इसीलिए वह अण्डे को अपने कमरे में अलग बर्तन में बनाकर खाती है। वह भी घर के अन्य सदस्यों से प्यार करती है इसीलिए घर की एकता और शांति बनाए रखने के लिए अपने पति का सहयोग देती है।

इससे स्पष्ट है कि घर में शांति, प्यार और एकता को बनाए रखने के लिए जिस विशेषता का होना चाहिए वह वीना में भी है। वह घर–परिवार को बनाए रखने के लिए अम्मा की पुरानी मान्यताओं का ध्यान रखते अपने शौक को अपने कमरे में ही पूरे करती है।

अन्य पात्र एक–दूसरे से जुड़कर कथा को आगे बढ़ाते हैं। सभी पात्र एक–दूसरे की मान–मर्यादाओं का पूरा ध्यान रखते हैं। माँ को ठेस न पहुँचे इसीलिए अण्डे का रहस्य छुपाकर रखते हैं। सभी पात्रों की परस्पर घनिष्ठता तथा आत्मीयता पूरे एकांकी में झलकती है।

11.4 निष्कर्ष

'अंडे के छिलके' एकांकी में सभी पात्र दोहरी मानसिकता को अपनाकर नए तथा पुराने के बीच सामंजस्य स्थापित करते हैं । अम्मा की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए परिवार के अन्य सदस्य अपनी इच्छाओं व शौक को छुपाकर रखते हैं। राधा, श्याम, गोपाल, बड़े भाई माधव सब एक–दूसरे के भेद की रक्षा करते हुए आदर का भाव रखते है। स्पष्ट है कि परिवार के सदस्यों की एकजुटता के कारण ही परिवार में संतुलन बना रहता है। अन्यथा परिवार में असंतोष का भाव जागृत हो जाता ।

11.5 कठिन शब्द

1) एक जुटता,

2) घनिष्ठता,

3) सामंजस्य,

4) स्वेच्छा

11.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र.1) राधा के चरित्र पर प्रकाश डालें।

प्र.2) वीना का चरित्र एकांकी में किस प्रकार का रहा है?

प्र.3) परिवार में एकता स्थापित कैसे की जा सकती है?

11.7 पाठनीय पुस्तकें

1. 'अण्डे के छिलके'– मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटक– बच्चन सिंह
3. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– नेमिचन्द्र जैन
4. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल
5. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक : मोहन राकेश के संदर्भ में– डॉ. रीता कुमार
6. रंगदर्शन– डॉ. नेमिचन्द्र जैन
7. हिन्दी नाटक उद्भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा

*****

B.A. HINDI	**Lesson No. 12**
COURSE CODE: HI-601	**B.A. Sem-VI**

'अण्डे के छिलके' की रंगमंचीयता

12.0 रूपरेखा

12.1 उद्देश्य

12.2 प्रस्तावना

12.3 'अण्डे के छिलके' की रंगमंचीयता

12.4 निष्कर्ष

12.5 कठिन शब्द

12.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.7 पठनीय पुस्तकें

12.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययनोपरांत आप मोहन राकेश की एकांकी की कथावस्तु से परिचित हो सकेंगे। साथ ही एकांकी में अभिव्यक्त पारिवारिक दृष्टिकोण को जान सकेंगे।

12.2 प्रस्तावना

मोहन राकेश स्वयं मध्यवर्गीय परिवार से जुड़े थे इसीलिए मध्यवर्गीय परिवार की झलक इस एकांकी में भी देखने को मिलती है। एक संयुक्त परिवार के छोटे–बड़े सदस्य किस प्रकार मर्यादाओं का पालन करते हुए अपना–अपना कार्य करते हैं। एक–दूसरे के मान–सम्मान की रक्षा भी करते हुए नज़र आते हें। इसका लेखक ने सहजता से चित्रण किया है।

12.3 'अण्डे के छिलके' की रंगमंचीयता

कथावस्तु या कथानक :– 'अंडे के छिलके' एकांकी का कथानक अत्यंत संक्षिप्त एवं सरल है। एकांकी में दिखाए जाने वाले घटनाक्रम का उद्देश्य एक ही होता है। कथावस्तु में स्थान, समय, कार्य की एकता का भी ध्यान रखना आवश्यक हो जाता है। एकांकी की शुरुआत में पर्दा जब उठता है तो गैलरी वाला दरवाज़ा खुला दिखाई देता है। पर्दा लटका हुआ है। जिससे पता नहीं चलता कि दरवाज़ा खुला है या बंद। श्याम सीटी बजाता अंदर आता है, बाहर वर्षा हो रही है। उसकी बरसाती से पानी टपक रहा है। यहीं से दृश्य का आरंभ होता है और अंत माधव की बातों से होता है। इस एकांकी में लेखक ने मध्यवर्गीय परिवार में एक पीढ़ी तथा दूसरी पीढ़ी के बीच की मानसिकता को व्यक्त किया है कि किस प्रकार परिवार के सदस्य एक–दूसरे की भावनाओं तथा भेद को जानते हुए भी चुप रहते हैं। परिवार की अम्मा जमुना के हृदय को ठेस न पहुँचे इसके लिए वह अपनी इच्छाओं को चोरी छुपे पूरा करते हैं। वीना अपने छोटे देवर श्याम को चाय पीने को कहती है। श्याम बारीश के मौसम का आनंद लेने के लिए चाय के साथ कुछ खाने के लिए कहता है। वीना उससे चार–छह अंडे लाने को कहती है। भाभी के मुँह से अंडे का नाम सुनकर श्याम चौंक जाता है तब वीना कहती है, "...यहाँ रोज़ सुबह अंडे का नाश्ता होता है। तुम्हारे भाई साहब ने यह बिजली का स्टोव किसलिए लाकर रखा है? ...तुम लोगों की यह बात मेरी समझ में बिलकुल नहीं आती। अगर खाना ही है तो उसमें छिपाने की क्या बात है? सबके सामने खाओ।"

वीना इधर–उधर की बातों में न उलझकर स्पष्टता से अंडे का रहस्य बता देती है। इतना ही नहीं श्याम भी अपनी सेहत को ध्यान में रखकर चोरी छिपे कच्चा अंडा खाता है। उसी तरह राधा भी अम्मा के सामने चंद्रकांता जैसी किताबों को नहीं पढ़ती क्योंकि उसका मानना है कि, "...माँ जी देखेंगी तो क्या सोचेंगी कि रामायण नहीं, महाभारत नहीं, दिनभर बैठकर ऐसे किस्से ही पढ़ा करती है।"

वीना चाय के लिए स्टोव पर केतली में पानी रखती है। गोपाल बाहर से आता है। चाय बनती देखकर प्रसन्न हो जाता है। वीना जब कहती है कि यह चाय श्याम के लिए है तो गोपाल कहता है, "क्या बात है, आजकल श्याम पर बहुत मेहरबान हो रही हो?"

इतना ही नहीं अपनी राधा भाभी की भी प्रशंसा करता है। गोपाल भी परिवार से छिपकर सिगरेट पीता है। राधा इस बात को जानती है पर किसी से नहीं कहती, इतने में श्याम भी अंडे लेकर पहुँचता है तो इस तरह सबकी पोल धीरे–धीरे खुल जाती है। वीना अंडे का हलवा बनाती है तभी जमुना देवी की आवाज़ सुनाई देती है तो सभी घबरा कर टाल–मटोल करने लगते हैं। जमुना अंदर आकर पूछती है, "क्या बात है, इस तरह दरवाज़ा बँद क्यों कर रखा था? ...सब लोग इस तरह चुपचाप क्यों हो गए हो?"

इतना ही नहीं माँ यह भी पूछती है कि स्टॅाव के ऊपर क्या रखा है? वह देखना चाहती थी मगर सभी कोई–न–कोई बहाने बनाते हैं। गोपाल माँ को हाथ लगाने से मना करता है। वह करंट मारने का डर दिखाता है।

राधा बहाना बनाती है कि श्याम के घुटने में गेंद लग गई है इसीलिए पुलटिस बनाकर उसे चुपचाप लेटने को कहती है। जमुना देवी स्वयं पुलटिस बाँधने को तैयार होती है और मेज़ पर से जम्पर उठाना चाहती है। जिसके नीचे अंडे के छिलके छिपाये गये थे। इतने में गोपाल फिर बीच में आकर माँ को रोक देता है और उन्हें कमरे तक छोड़ने जाता है। वह सभी हलवा खाने लगते हैं और अंडे के छिलके को छुपाने का सोचते है तभी बडा भाई माधव आता है। वह सब कुछ जानते हुए भी इन सबको कुछ नहीं कहता। गोपाल अपने बड़े भाई माधव से अनुरोध करता है कि वह अम्मा को अंडे का रहस्य न बताए। अंततः माधव कहता है कि अम्मा को अंडे का रहस्य पता है। अब अंडे के छिलके छिपाने की जरूरत नहीं है, श्याम और गोपाल आश्चर्यचकित होकर कहते हैं, "**...**अम्माँ भी जानती हैं?

माधव : क्यों नहीं जानतीं? अम्माँ तो शायद मेरी वे बातें भी जानती हैं जो मैं समझता हूँ कि वे नहीं जानतीं (हँसकर) आज से छिलके नाली में डाल दिया करो, इनके लिए डिब्बा रखने की ज़रूरत नहीं।**...** और जहाँ तक अम्माँ का सवाल है, अम्मां इन्हें नाली में पड़े हुए भी नहीं देखेंगी। हलकी–हलकी हँसी हँसता रहता है।"

पात्र–चित्रण :– एकांकी में विषयानुरूप एक केन्द्रीय पात्र या नायक के साथ थोड़े–से सहायक पात्र रखे जाते हैं जो कथा को आगे बढ़ाते हैं। एकांकी की शुरूआत चाहे श्याम और वीना जैसे पात्र से हुई है लेकिन राधा एक ऐसी पात्र है जो कथा को आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध होती है। राधा, श्याम और वीना के अतिरिक्त गोपाल, माधव और जमुना ऐसे पात्र हैं जो बीच में उपस्थित होकर अपनी छाप छोड़ जाते हैं। इस परिवार में परम्पराओं और संस्कारों के रूप में एक वृद्धा माँ (जमुना) है। उसकी दो पुत्र वधुएँ राधा और वीना हैं जो दो प्रकार की विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व करती है। राधा कम पढ़ी–लिखी है फिर भी उसे पढना–लिखना अच्छा लगता है इसीलिए उसे जब समय मिलता वह पढ़ने का मौका नहीं छोड़ती। वह किताबें मँगवा कर रखती है और रात को जब सब सो जाते तो मोमबत्ती जगाकर पढ़ती रहती। राधा दिमाग से तेज और हाजिरजवाब स्त्री के रूप में हमारे सामने आती है। वह बात को अच्छी तरह संभालना जानती है। इस बात की पुष्टि तब होती है जब अचानक अम्मा कमरे में आती है तो उस समय अंडे का हलवा बन रहा था। अपनी बुद्धि और चतुरता से अम्मा के शक को कुछ हद तक दूर करने में सफल रहती है। राधा परिवार के सभी सदस्यों का सम्मान करती है। इसके विपरीत वीना में आधुनिकता का पुट अधिक दिखता है। उसके विचारों में भी स्पष्टता देखने को मिलती है, "भई, तुम लोगों की यह बात मेरी समझ में बिलकुल नहीं आती। अगर खाना ही है तो उसमें छिपाने की क्या बात है? सबके सामने खाओ।"

वीना स्पष्टवादिनी है। वह जो भी कार्य करती है उसे खुलेआम करना पसंद करती है। उसके चेहरे पर किसी भी प्रकार का कोई मखौटा नहीं है और न कोई पाप। इसके अतिरिक्त परिवार में माधव, गोपाल और श्याम तीन भाई हैं, ये तीनों भी एक–दूसरे से अपना–अपना भेद छिपाते हैं।

एकांकी की मुख्य कथा शाकाहारी परिवार के सदस्यों के द्वारा चोरी छिपे अंडे खाने और उन अण्डों के छिलकों को कभी कोट की जेब में छिपाना तो कभी मोज़ों में छिपाना इत्यादि हरकत का पर्दाफाश होने की घटना पर आधारित

है। मोहन राकेश ने बड़ी ही सादगी से मध्यवर्गीय परिवार की खोखली मान्यताओं को हास–परिहासपूर्ण संवादों के माध्यम से उकेरा है।

वातावरण और देशकाल :–

देशकाल और वातावरण का रंगमंच–प्रस्तुति में महत्वपूर्ण स्थान होता है। रंगमंच में जो भी दर्शाया जाता है उसमें वातावरण का पूरा ध्यान रखना अनिवार्य है तभी एकांकी सफल होती है। मंच की व्यवस्था, साज–सज्जा, प्रकाश, ध्वनि के द्वारा ही देशकाल को साक्षात कर दिया जाता है तभी दर्शक नाटक से प्रभावित होते हैं। पात्रों की मुखमुद्रा, हाव–भावों, वेश–भूषा आदि के विवरण से उनका अभिनय अधिक सशक्त हो जाता है। एकांकी के प्रारम्भ में दृश्य निर्माण के संकेत इस प्रकार दिये हैं, ''परदा उठने पर गैलरी वाला दरवाज़ा खुला दिखाई देता है। बाईं ओर के दरवाज़े के आगे परदा लटक रहा है जिससे पता नहीं चलता कि दरवाज़ा खुला है या बंद। कमरे में कोई नहीं है। लेखक ने वर्षा के दृश्य को बड़ी ही सजीवता के साथ प्रस्तुत किया है। ''श्याम सीटी बज़ाता गैलरी से आता है, पतलून–कमीज़ के ऊपर । बरसाती पहने। सिर भीगा है। बरसाती से पानी निचुड़ रहा है। अंदर आकर वह इधर–उधर नज़र दौड़ाता है।''

इस तरह के दृश्यों का वातावरण बनुकर कथा में रोचकता उत्पन्न होती है।

संवाद :– एकांकी की कथावस्तु को गतिशील बनाने में पात्रों द्वारा बोले गए संवादों का बहुत महत्त्व होता है। इन्हीं से पात्रों का चरित्र भी उद्घाटित होता है। संवादों के बिना पात्रों के चरित्र या कथा को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। संवाद रंगमंच की शोभा को और बढ़ा देते हैं। संवादों के प्रयोग द्वारा ही पात्रों की जीवन शैली को दर्शाया गया है कि किस तरह वह संवादों के माध्यम से एक–दूसरे के भीतर छिपे रहस्यों को उत्सुकता से जान रहे हैं। इसका स्पष्ट उदाहरण तब मिलता है जब वीना, राधा की किताब हँसी–मज़ाक में छिपा लेती है। राधा उससे अपनी किताब छीनने का प्रयत्न करती है तो उस समय वीना कहती है, ''छीनाझपटी में नहीं दूँगी, जीजी! ऐसे माँग लो तो दे दूँगी। मगर इसमें इस तरह छिपाकर पढ़ने की क्या बात है?... इसमें ऐसा तो कुछ भी नहीं कि इसे तकिए के नीचे छिपाकर रखा जाए और दरवाज़े बंद करके पढ़ा जाए।

राधाः न भइया न! हम माँ जी के सामने ऐसी चीज़ कभी नहीं पढ़ सकते। कोई खराब चाहे न हो मगर माँ जी देखेंगी तो क्या सोचेंगी कि रामायण नहीं, महाभारत नहीं, दिन भर बैठकर ऐसे किस्से ही पढ़ा करती है।''

अंततः हम कह सकते हैं कि अपने संक्षिप्त कथानक, सीमित पात्रों, समुचित रंगमंचीय संकेतों तथा चुस्त संवादों के कारण 'अंडे के छिलके' अभिनय की दृष्टि से एक सफल रचना है।

भाषा–शैली :– भाषा और शैली एकांकी को कलात्मक स्वरूप प्रदान करते हैं। इसके द्वारा ही एकांकी के चरित्रों का पता चलता है। भाषा के माध्यम से देशकाल व वातावरण का परिचय मिलता है। एकांकी की भाषा सशक्त, भावानुकूल और स्थिति उद्घाटित करने वाली होनी चाहिए। एकांकी में पुर्तगाली भाषा के शब्द पतलून, कमीज़, मेज़, चम्मच,

अलमारी का प्रयोग हुआ है। इसी के साथ–साथ अंग्रेज़ी शब्द फ्राईंग पैन, स्टोव, कोट शब्द भी देखने को मिलते हैं। अरबी के शब्द–किताब, मौसम, कुरसी, फारसी के शब्द बाज़ार, चीनी भाषा का शब्द चाय, आदि का प्रयोग हुआ है। मोहन राकेश की प्रस्तुत एकांकी के अन्तर्गत पात्रों का चरित्र, कार्यकलाप संवाद सभी कुछ इतना सरल और स्वाभाविक है कि सचेष्ट कुछ नहीं लगता।

उद्देश्य :– इस एकांकी द्वारा मध्यवर्गीय परिवार में दो पीढ़ियों के बीच की मानसिकता को दिखाना ही लेखक का उद्देश्य है। लेखक ने इस एकांकी के माध्यम से परिवार की एकता व मान–सम्मान की भावना को भी दर्शाने का प्रयास किया है कि अगर परिवार के सदस्यों के बीच परस्पर प्रेम हो तो वह परिवार अच्छे से चल सकता है अन्यथा सदैव टकराव की स्थिति ही बनी रहेगी।

12.4 निष्कर्ष

'अण्डे के छिलके' मोहन राकेश की कालजयी रचना है। एकांकी के माध्यम से लेखक ने परिवार के बीच सामंजस्य की भावना और सम्मान की भावना को उद्घाटित करते हुए परिवार को सही ढंग से चलाने का मूल मंत्र बताया है।

12.5 कठिन शब्द

1. तिलिस्म,
2. कृतज्ञता,
3. झाँसा,
4. मरदूद,
5. बाँच,
5. महरी,
7. तलब,
8. सौगात

12.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र.1) 'अण्डे के छिलके' एकांकी का उद्देश्य स्पष्ट करें।

प्र.2) एकांकी की संवाद योजना पर प्रकाश डालें।

प्र.3) 'अण्डे के छिलके' एकांकी के देशकाल व वातावरण को स्पष्ट कीजिए।

प्र.4) निम्न पंक्तियों की प्रसंग व्याख्या करें :–

न भइया न! हम माँ जी के सामने ऐसी चीज़ कभी नहीं पढ़ सकते। कोई खराब बात चाहे न हो मगर माँ जी देखेंगी तो क्या सोचेंगी कि रामायण नहीं, महाभारत नहीं, दिनभर बैठकर ऐसे किस्से ही पढ़ा करती हैं।

12.7 पाठनीय पुस्तकें

1. 'अण्डे के छिलके'– मोहन राकेश
2. हिन्दी नाटक– बच्चन सिंह
3. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– नेमिचन्द्र जैन
4. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच– डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल
5. स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी नाटक : मोहन राकेश के संदर्भ में– डॉ. रीता कुमार
6. रंगदर्शन– डॉ. नेमिचन्द्र जैन
7. हिन्दी नाटक उद्‌भव और विकास– डॉ. दशरथ ओझा

*****